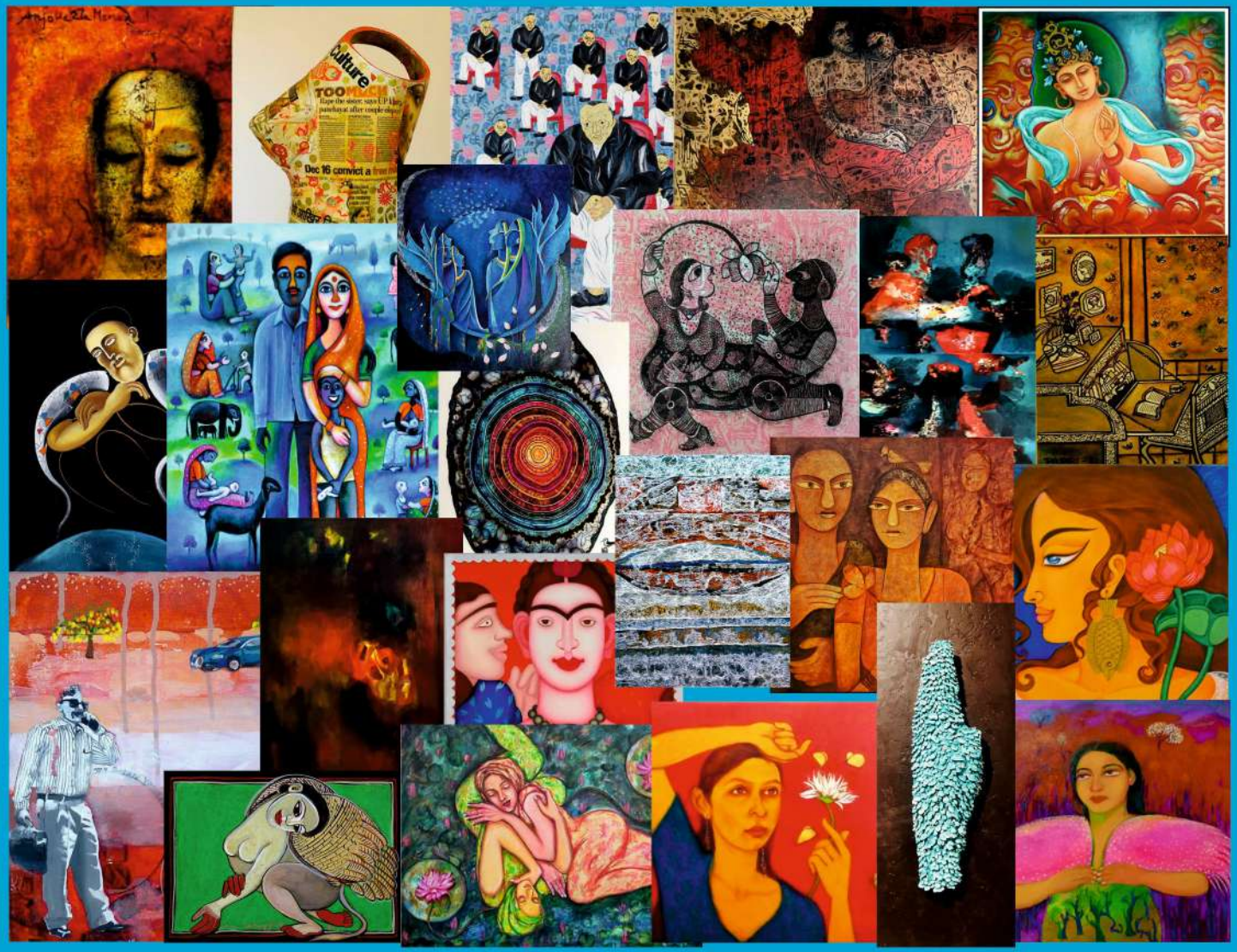
दहलीज पार कला 1

डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज



अनुक्रणिका

दहलीज पार कला	1
अंजलि इला मेनन	6
अर्पिता सिंह	9
अर्पणा कौर	14
गोगी सरोजपाल	18
डॉ. अमृत कपूर	23
अनीता तंवर	28
अंजली प्रभाकर	33
आराधना टंडन	38
बी. जया लक्ष्मी	43
दीपा पटवारी	48
दुर्गा कैंथोला	53
जयिता बोरठाकुर	58
कामिनी बघेल	62
मैत्रेयी नंदी	67
निर्मला सिंह	71
निताशा जैनी	76
पापरी चौधरी	81
पुष्पा दुल्लर	85
राखी कुमारी	90
संजीदा खानम	95
संजु दास	100
स्वाती साबले	105
विजया वेद	110

दहलीज पार कला 1

स्त्री कलाकारों की दुनिया

डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज

प्रकाशक/ लेखक

डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज

एफ.2/781 शालीमार गार्डन एक्सटेंशन–1

साहिबाबाद, गाजियाबाद, उ. प्र. 201001

सर्वाधिकार लेखकाधीन

मूल्य : 500

Publisher/ Writer

Dr. Ved Prakash Bhardwaj

F-2/ 781 Shalimar Garden Ext. 1

Sahibabad, Ghaziaba, (UP) 201001

Mob. 9871699401

Email: bhardwajvedprakash@gmail.com

ISBN 978-93-341-3444-5

दहलीज पार कला 1

स्त्री कलाकारों की दुनिया

डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज



अमृता शेरगिल की पेंटिंग

अनादि काल से कला मूलतः स्त्रियों का व्यवहार रही है। हमारी जितनी भी लोक कलाएँ हैं, उनमें से ज्यादातर का पालन–पोषण स्त्रियों ने ही किया है। यह अलग बात है कि इस बात को कभी दर्ज नहीं किया गया। स्त्रियों की सामाजिक और सांस्कृतिक भूमिका हमेशा से हाशिये पर धकेली जाती रही है। आधुनिक कला के दौर में भी यही होता रहा पर समय के साथ बदलाव आया और स्त्री कलाकारों को महत्व मिलने लगा। हालांकि इस महत्व में भी भेदभाव दिखाई देता है। और यह तब हुआ है जब कला के आर्थिक पक्ष पर ज्यादातर महिलाओं का प्रमुत्व रहा है। ज्यादातर गैलरियों का संचालन स्त्रियों के हाथ में रहा है, कला का व्यापार उनके हाथ में रहा है, और कला लेखन का बड़ा हिस्सा भी उनकी कलम से ही निकला है। इसके बाद भी स्त्री कलाकारों की दुनिया को उतना महत्व नहीं दिया गया जितने की वह हकदार हैं। भारतीय आधुनिक कला की शुरुआती कलाकार अमृता शेरगिल के साथ भी यही हुआ। पश्चिमी कला के प्रभाव के बाद भी अमृता शेरगिल ने जिस तरह कला में विषय और प्रयोग के स्तर पर भारतीय कला को समृद्ध किया, वह बड़ा काम था।

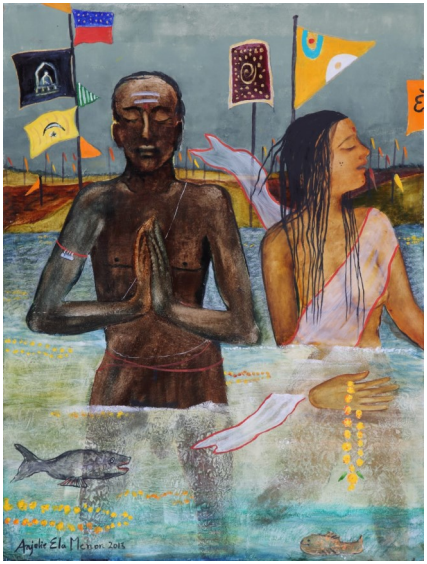
कोई बीस साल पहले जब मैं एक लेख के सिलसिले में अर्पिता सिंह से बात कर रहा था तो उन्होंने इस बात पर आपत्ति की थी कि मैं कला में स्त्री और पुरुष जैसा कोई विभाजन क्यों कर रहा हूँ। मेरा विषय था कि तमाम परिवर्तनों के बाद भी पुरुषों की तुलना में कला में स्त्रियों की संख्या कम क्यों है। उन्होंने कहा था कि



अर्पिता सिंह की पेंटिंग

वह कला में स्त्री और पुरुष कलाकार जैसा विभाजन नहीं मानतीं। सैद्धांतिक रूप में उनकी बात सही है पर व्यावहारिक स्तर पर देखें तो यह विभाजन साफ दिखाई देता है। 20 साल पहले यह बात प्रमुखता से उभर कर आयी थी कि स्त्रियों को कला करने से पहले अपने परिवार की देखभाल का दायित्व निभाना पड़ता है इसलिए वह कला कम कर पाती हैं या कर ही नहीं पाती हैं। आज देखता हूँ कि स्थिति में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं आया है। आज भी बहुत सारी महिला कलाकारों के लिए कला करना एक चुनौती होती है। बहुत सारी महिला कलाकारों के परिवार को लगता है कि वह कला में समय और धन को नष्ट कर रही हैं। इसके बाद भी अनेक ऐसी स्त्री कलाकार हैं जिन्होंने समाज की इस सामंतवादी पुरातनपंथी सोच को चुनौती देते हुए खुद को एक कलाकार के रूप में स्थापित किया है या ऐसा करने के लिए संघर्ष कर रही हैं।

आज हमारे पास अर्पिता सिंह, अंजलि इला मेनन, नसरीन मोहम्मदी, गोगी सरोजपाल, अर्पणा कौर, माधवी पारेख, शोभा बरूटा, कंचन चंदर, नलीनी शेख, ज्योत्सना भट्ट, भारती खेर सहित अनेक बड़े नाम हैं फिर भी हम देखते हैं कि उनकी संख्या पुरुषों की तुलना में कम है। पिछले कुछ सालों में तस्वीर बदली है और बड़ी संख्या में स्त्रियाँ कला के क्षेत्र में आगे आई हैं। कल तक महिला कलाकार दहलीज के अंदर सिमटी थी और लोक कला के रूप में ही स्वीकार्य थी, पर अब ऐसा नहीं है। महिला रचनाकार दहलीज को पार करके आधुनिक कला के क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज करा चुकि हैं। यह पुस्तक ऐसी ही स्त्री कलाकारों की कला का विमर्श है जिन्होंने लंबे संघर्ष के बाद अपनी अलग पहचान बनाई है।



अंजलि इला मेनन की पेंटिंग

बीसवीं शताब्दी के अंत तक जो भारतीय सामाजिक व्यवस्था थी, उसमें स्त्रियों की दुनिया का विस्तार होने लगा था। शिक्षा के विस्तार और

रोजगार ने स्त्रियों की दुनिया को बदलना शुरु किया। कला के क्षेत्र में इस दौरान कई ऐसी स्त्री कलाकार सामने आईं जिन्होंने सामाजिकता, शुचिता और मानसिकता के दायरे को तोड़ना शुरु किया। स्त्री की अनावृत्त देह पुरुष प्रधान कला में हमेशा से एक विषय रही पर स्त्री कलाकार भी उसे रचे, यह कभी स्वीकार नहीं हुआ। बीसवीं शताब्दी में ही भारत की कुछ कलाकारों ने इस बंधन को तोड़ना शुरु कर दिया। अंजलि इला मेनन, अर्पिता सिंह, गोगी सरोजपाल आदि के नाम इसके लिए प्रमुखता से लिये जा सकते हैं। बीसवीं शताब्दी में कुछ ऐसी महिला कलाकार सामने आईं जिन्होंने स्वयं को अनावृत्त चित्रित करना शुरु किया। इसी दौर में निताशा जैनी जैसी कलाकार ने पुरुष सत्ता को चुनौती देते हुए पुरुषों की अनावृत्त छवियाँ रचने का साहस दिखाया। स्त्री कलाकारों की दुनिया में यह एक बड़े बदलाव का संकेत था। इसी से हम देखते हैं कि आज जो स्त्री कलाकार सक्रिय हैं उनकी कला में विषय और प्रयोग दोनों स्तर पर साहस दिखाई देता है।



गोगी सरोजपाल की पेंटिंग

आज की कलाकार चित्र व शिल्प के साथ ही ग्राफिक, म्यूरल, इंस्टालेशन, वीडियो आर्ट, आदि कर रही हैं, वह अपनी कला में समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विषयों को आलोचनात्मक दृष्टि के साथ रच रही हैं। आराधना टंडन, संजु दास की कला में स्त्री की दुनिया में घर के साथ ही उनकी अपनी इच्छाओं का संसार भी है। उनकी नायिकाएँ पारंपरिक और आधुनिक दोनों हैं। वह एक तरह से समय की विरोधाभासी स्थितियों को सामने लाती हैं।



माधवी पारेख की पेंटिंग

संजीदा खानम जैसी कलाकार अमूर्तन को नया अर्थ देने का प्रयास करती है। मैत्रेयी नंदी स्त्री के निजी व सार्वजनिक अधिकारों की घोषणा करती दिखाई देती हैं। वह साफ कहती हैं कि स्त्री की देह और उसके मन पर सिर्फ उसका ही अधिकार है। विजया वेद अपनी कला में अध्यात्म और दर्शन के माध्यम से जीवन को अलग तरह से पढ़ने का काम करती हैं। और भी कलाकार हैं जो अपनी तरह से भारतीय कला को समृद्ध करते हुए उसमें बराबरी के हक के साथ खड़ी दिखाई देती हैं। उन्होंने कला को दहलीज की सीमा से मुक्त कर बाहर की दुनिया में स्थापित कर दिया है। पापरी चौधरी की कला स्थिर जीवन का चित्रण करते हुए उसमें मनुष्य की उपस्थिति को अनोखे तरीके से दर्ज करती हैं। स्वाति सबले स्त्री के संघर्ष को रचती हैं तो अनीता तंवर की कला में स्त्री और प्रकृति का अंतरसंबंध प्रमुख है। दुर्गा कैंथोला की कला स्त्री स्वतंत्रता व अस्मिता का जयघोष करती है। अमृत कपूर अपनी कला में स्त्री की आकांक्षाओं और उड़ान को सामने रखती हैं। जयिता बोरठाकुर और कामिनी बघेल की कला स्त्री के सामाजिक परिवेश को अलग दृष्टि से देखने की मांग करती है।



संजु दास की पेंटिंग

भारतीय कला परंपरा का सबसे सशक्त पक्ष लोक कलाएँ हैं। लोक कलाँ मूलतः स्त्रियों के हाथों परवान चढ़ी हैं। स्त्रियों ने लोक कलाओं में जीवन के विविध आयामों को विभिन्न शैलियों में रचते हुए जिस रचनात्मकता का परिचय दिया, उसका यथोचित सम्मान नहीं हुआ। पुरुषवादी सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों के किसी भी तरह के रचनात्मक योगदान के साथ ऐसा होने में कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। भारतीय समाज में शताब्दियों तक स्त्रियों की दुनिया घर की दहलीज के अंदर सिमटी रही है। उससे बाहर जाना और सोचना उनके लिए एक तरह से वर्जित ही रहा है। यही कारण है कि उनकी कलाओं का दायरा भी दहलीज के अंदर ही रहा है। लोक कलाओं की सृजनकर्ता महिलाओं के विषय या तो धार्मिक रहे या फिर घर–परिवार, उनमें भी निजी भावनाओं से अधिक सामाजिक व्यवहार और दायित्वों की प्रमुखता रही। लोक कलाओं का इसीलिए समाजशास्त्रीय अध्ययन कभी संभव नहीं हुआ। यह इसलिए भी नहीं हुआ क्योंकि इस तरह का अध्ययन करने वाले पुरुष ही होते थे जिनके लिए स्त्री को केंद्र में रखकर किसी तरह के बौद्धिक विमर्श का कोई औचित्य नहीं होता था। यह मानसिकता कमोबेश आज भी जारी है। अलबत्ता आधुनिक कला के दौर में स्त्रियों ने

रचनात्मक चुनौतियों से पार पाते हुए अपने लिए सम्मानजनक स्थान बनाया है।

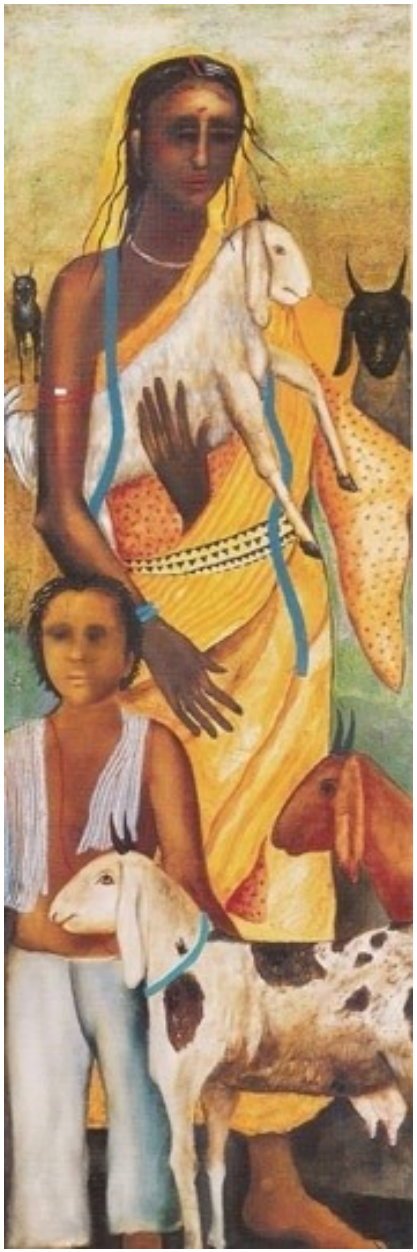
कला की दुनिया में स्त्री या पुरुष कलाकार जैसे किसी विभाजन का कोई औचित्य भले ही नहीं है पर यह साफ देखा जा सकता है कि समाज और कला के आर्थिक पक्ष तक में किस तरह लैंगिक भेदभाव कायम है। स्त्री की रचनात्मकता को बौद्धिक क्रिया न मानने का मध्यकालीन हठ आज भी दिखाई देता है। इसके बाद भी पिछली शताब्दी में स्त्री कलाकारों ने जिस तरह अपने लिए कला में स्थान बनाया और अपनी अभिव्यक्ति को दहलीज की सीमा से बाहर निकाला वह अर्थपूर्ण है। इस संदर्भ में हम अर्पिता सिंह का जिक्र करना चाहेंगे जिन्होंने अपनी कला में स्त्री विमर्श के साथ ही समकालीन सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिदृश्य पर आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। इसके साथ ही अनेक महिला कलाकारों ने अपने कलाकर्म में स्त्री चेतना, उसके अस्तित्व, लैंगिक समानता, और सबसे बड़ी बात, अपनी देह पर अपने अधिकार का दावा मजबूती से प्रस्तुत किया। यहीं से भारतीय आधुनिक कला में स्त्री कलाकारों की अलग दुनिया बननी शुरु हुई जो दहलीज की सीमा के अंदर की नहीं, दहलीज के बाहर की कला है। परिवार और संबंधों के प्रति स्त्री की कोमल भावनाएँ कला के दायरे से बाहर नहीं हुईं पर उनके साथ ही दहलीज पार के संसार का उसमें प्रवेश एक बड़ी घटना है।

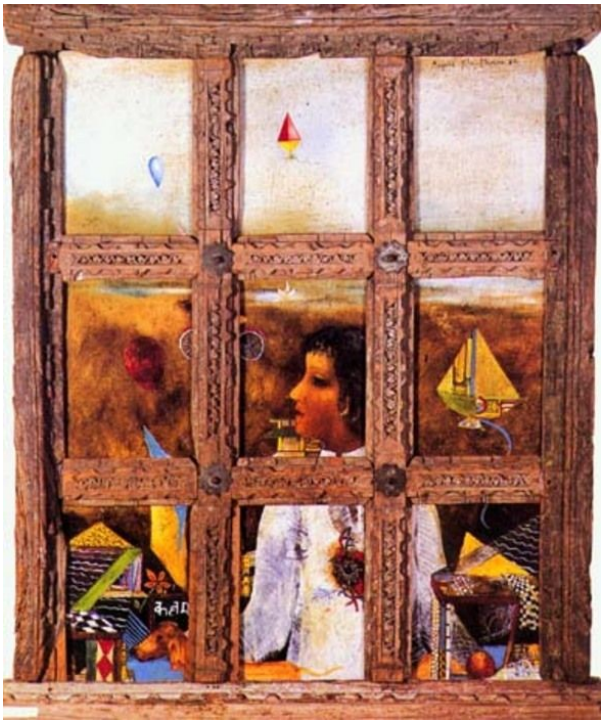
समकालीन कला में स्त्रियों की उपस्थिति एक और रूप में उल्लेखनीय है, कि उन्होंने लोक कलाओं के अनेक रूपों को समकालीन मुहावरा बनाने का साहस दिखाया है। माधवी पारेख से इसकी शुरुआत मानना गलत नहीं होगा जिन्होंने आदिवासी व लोक कलाओं के कुछ रूपों को लेकर अपनी अलग कला भाषा तैयार की। अर्पणा कौर में मधुबनी कलाकार को अपने कलाकर्म में सहभागी बनाया। बाद में उन्होंने अपनी पेंटिंग्स में वरली कला को भी इस्तेमाल किया। आज कई ऐसी कलाकार सामने आई हैं जिन्होंने मधुबनी, मिथिला और दूसरी लोक कलाओं को समाहित करते हुए समकालीन कला की दुनिया को समृद्ध किया है। ऐसी कलाकारों में अर्पिता रेड्डी, संजु दास, मीनाक्षी बनर्जी, रागिनी सिन्हा, राखी कुमारी आदि के नाम प्रमुखता से लिए जा सकते हैं। इनके अलावा भी अनेक कलाकार हैं जिन्होंने कल तक स्त्रियों की मानी जाने वाली कला को आधुनिक कला में बदलने का साहस किया है। प्रत्येक पुस्तक की एक सीमा होती है इसीलिए इसमें मैं चाहकर भी अनेक कलाकारों को इस पुस्तक में शामिल नहीं कर पाया हूँ। प्रयास है कि महिला कलाकारों को लेकर पुस्तकों की एक श्रृँखला तैयार की जाए। अगली पुस्तक में कुछ और कलाकारों को लेकर लिखने का इरादा है। तब तक के लिए यह पुस्तक आपके सामने है।



अंजलि इला मेनन

समकालीन भारतीय कला में महिला कलाकारों की महत्त्वपूर्ण भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता। एक समय चित्रकला और शिल्प कला क्षेत्र जैसे केवल पुरुषों के लिए माना जाता था। पिछली शताब्दी में अमृता शेरगिल पहली महिला कलाकार थीं जिन्होंने इस क्षेत्र में न केवल देश में अपनी पहचान बनायी, बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी खुद को स्थापित किया। इतना ही नहीं, अमृता शेरगिल ने अपने समकालीन और परवर्ती कई चित्रकारों को प्रभावित किया। अंजलि इला मेनन के काम पर भी अमृता शेरगिल का प्रभाव देखा गया है। अंजलि इला मेनन, देवयानी कृष्णा, अर्पिता सिंह, अर्पणा कौर, गोगी सरोजपाल, रेखा रोदवित्तीया, बुलबुल शर्मा, कंचन चंदर और अनेक अन्य महिला कलाकारों ने कला के क्षेत्र में चले आ रहे पुरुषों के वर्चस्व को न केवल चुनौती दी, बल्कि खुद को स्थापित भी किया। इनमें अंजलि इला मेनन का नाम यदि अग्रणी माना जाता है तो इसलिए कि उन्होंने अपने पांच दशक से अधिक के कला जीवन में विषय, तकनीक और प्रयोग के





स्तर पर लगातार खुद को साबित किया है। करीब सत्रह वर्ष की उम्र में बनाये अपने पहले चित्र हेड को वे आज भी अपने लिए एक आधार, एक उदाहरण के रूप में स्वीकार करती हैं।

1940 में जन्मीं अंजलि इला मेनन ने कला का पहला पाठ सोलह वर्ष की उम्र में मुंबई के सर जेजे स्कूल ऑफ आर्ट में सीखा। वहाँ की शिक्षा का ढांचा पूरी तरह ब्रिटिश था परंतु स्कूल से बाहर देखी प्रदर्शनियों के माध्यम से उनका परिचय असली भारतीय कला से हुआ। वहीं पहली बार उन्होंने एमएफ हुसैन और मोहन सामंत का काम देखा जिसके बारे में वे बेहिचक स्वीकार करती हैं कि दोनों कलाकारों ने उन्हें काफी प्रभावित किया। अंजलि जी के अनुसार एक समय हुसैन की मोटी काली लकीरों और इकहरी सतहों ने उन्हें इस कदर प्रभावित किया कि वे उनका अनुसरण करने लगीं, परंतु विषय के स्तर पर वे हुसैन से अलग रहीं। सर जेजे स्कूल उन्हें छह माह बाद ही छोड़ना पड़ा।

अट्ठारह वर्ष की उम्र में उन्होंने जो चित्र बनाये उनकी छवियों में रोमानियत ज्यादा थी। उसका एक कारण अमृता शेरगिल का प्रभाव था जिसे वे स्वीकार भी करती हैं। अंजलि इला मेनन ने अपनी पहली प्रदर्शनी में 53





चित्र प्रदर्शित कि ये थे जो कई शैलियों में थे। परंतु जब वे पेरिस में कला अध्ययन के लिए गयीं तो जैसे उनकी कला की धारा ही बदल गयी। उनके सामने विचारों व दृष्टियों का एक खुला आकाश था, एक बदली हुई दुनिया थी। कहा जाता है कि उनके काम पर पश्चिमी कला का बहुत अधिक प्रभाव है। यह एक हद तक सही भी है क्योंकि उनकी कला की वास्तविक शुरूआत पेरिस में अध्ययन के बाद ही होती है। परंतु यह भी ध्यान देने की बात है कि उनकी तकनीक पर भले ही पश्चिम का असर हो, परंतु उसकी आत्मा भारतीय है। यही वजह है कि वे जब अपनी कला को भारतीयता से जोड़ना चाहती हैं तो न केवल विषय, बल्कि शैली के रूप में भी वे कैलेंडर कला को अपनी कला का एक अंग बनाती हैं क्योंकि वह पूरी तरह भारतीय है और समकालीन भी। इस बारे में उनको यह शिकायत है कि देशी की बात करते ही हम अतीत में लौटने लगते हैं और अजंता, लघु चित्रशैली आदि के बारे में सोचने लगते हैं परंतु अपने आसपास की कला, चाहे वह कैलेंडर के रूप में हो या रिक्शाओं, बसों, ट्रकों पर की जाने वाली पेंटिंग, उसकी तरफ ध्यान तक नहीं देते। उन्होंने इस पर ध्यान दिया और अपनी कला में कैलेंडर कला के तत्वों को समाहित कर उन्हें नये संदर्भ दिये, उन्हें समकालीन अर्थ दिये।

अर्पिता सिंह : मानवीय भू–दृश्य



भारतीय समकालीन कलाकारों में जिन महिला कलाकारों ने अपनी अलग पहचान ही नहीं बनानी बल्कि भारतीय कला को एक दिशा भी दी है उनमें अर्पिता सिंह का नाम अग्रणी है। भारत की पहली आधुनिक महिला कलाकार अमृता शेरगिल थीं जिन्होंने पश्चिमी कला के मुहावरे का प्रयोग करते हुए भारतीयता में रंगे चित्रों की रचना की थी। उनके इस अवदान को नकार नहीं सकते परन्तु यदि कलात्मक उपलब्धियों की दृष्टि से देखा जाए तो अर्पिता सिंह को इस बात का श्रेय दिया ही जाना चाहिए कि उन्होंने अपनी कला में ऐसे प्रयोग किये और उन तमाम विषयों को उठाया जो आमतौर पर लम्बे समय तक महिला कलाकारों के दायरे से बाहर रहे। हालांकि अर्पिता सिंह को महिला और पुरुष कलाकार जैसा कोई विभाजन स्वीकार नहीं है पर इसमें कोई संदेह नहीं कि एक महिला होने के कारण ही हम पाते हैं कि उनके आरम्भिक कामों में समाज में महिलाओं और बच्चियों की स्थिति को लेकर एक आलोचनात्मक दृष्टिकोण मिलता है। यह आलोचनात्मक दृष्टिकोण ही उन्हें अपने समय में बड़ी कलाकार बनाता है जिसके चलते उनके बाद की पीढी की कलाकारों में अपने समय और समाज को देखने का एक नया नजरिया जोर पकड़ता गया। उनकी इसी आलोचनात्मक दृष्टि का विकास हम उनके बाद के कामों में पाते हैं। अपनी आरम्भिक कला में अमूर्त भू–दृश्य रचने वाली अर्पिता सिंह ने अपनी इसी आलोचनात्मक दृष्टि का प्रयोग करते हुए ऐसे मानवीय भू–दृश्य रचे जो समकालीन जीवन के विभिन्न पक्षों को सामने रखते हैं। अर्पिता सिंह के बाद ऐसी





चित्रकारों की एक लम्बी फेहरिस्त बनायी जा सकती है जिन्हें एक सजग और विचारवान कलाकार कहा जा सकता है। यदि यह कहा जाए कि अर्पिता सिंह ने महिला कलाकारों के लिए सजावटी और शौकिया कला के दायरे को तोड़ कर उनके लिए नया मार्ग प्रशस्त किया तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

पश्चिम बंगाल में 1937 में एक बंगाली परिवार में जन्मीं अर्पिता पारिवारिक कारणों से दिल्ली में आकर बस गयीं। यहीं उन्होंने स्कूल ऑफ आर्ट, दिल्ली पोलिटेक्नीक से कला की शिक्षा ग्रहण की। यहीं उनकी परमजित सिंह से मुलाकात हुई जो लम्बी मित्रता के बाद जीवन भर का साथ बन गया और वे अर्पिता सिंह हो गयीं। 1959 में कला शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने भारत सरकार में कॉटेज इंडस्ट्रीज रेस्टोरेशन प्रोग्राम में नौकरी कर ली जहाँ पारम्परिक कलाकारों और बुनकरों से उनकी मुलाकात हुई और कहा जाता है कि उनका उनके काम पर प्रभाव भी पड़ा। हालांकि उस दौर में उनके चित्र श्वेत–श्याम और अमूर्त होते थे। परन्तु अस्सी के दशक में उन्होंने बंगाल की लोक कला से प्रभावित होकर काम किये जिनका विषय महिलाएँ थी। उन चित्रों में उन्होंने महिलाओं को निजी और दैनिक कार्यों में व्यस्त पेंट किया था। शुरूआत में उन्होंने ज्यादातर कागज पर जलरंगों से चित्र बनाये थे।

उन्होंने 1990 के दशक में कैनवास पर तैल रंगों से काम शुरू किया जिसके कारण उनके काम में एक बड़ा परिवर्तन आया। यहीं से कैनवास के आकार के साथ–साथ उनकी कला में विषय का भी विस्तार शुरू हुआ। इस दौर में उन्होंने कुछ ऐसे चित्रों की भी रचना की जिनमें महिलाओं को अनावृत्त रचा गया था परन्तु उनमें उन्होंने महिलाओं की कोमलता और संवेदनशीलता को उभारा, उनमें कहीं भी नग्नता या काम–भाव नहीं था। उसके बाद से उनके अनेक चित्रों में महिलाएँ अनावृत्त आती गयीं परन्तु उस अनावृत्त देह का अर्थ–विस्तार अपने समय में महिलाओं की स्थिति के साथ–साथ मानव कार्य–व्यापार में बढती हिंसा पर एक आलोचनात्मक टिप्पणी तक जाने लगा है। यदि यह कहा जाए कि उनका रचना संसार निजी से सार्वजनिक जीवन में प्रवेश



कर गया तो कुछ गलत नहीं होगा।

एक बार एक बांग्ला पत्रिका के पूजा अंक के लिए उन्होंने आवरण चित्र बनाया जिसमें दुर्गा के हाथ में पिस्तौल आदि दिखाने के कारण काफी हंगामा हुआ। अर्पिता सिंह ने उस चित्र में अपने समय में व्याप्त हिंसा को प्रतिकात्मक रूप में अभिव्यक्त किया था। दरअसल उनके बाद के कामों को देखें तो उनमें एक तरफ समाज में बढ़ती हिंसा के प्रति एक आलोचनात्मक टिप्पणी लगातार नजर आती है। साथ ही उन्होंने महानगरीय जीवन के विरोधाभासों और राजनीतिक–प्रशासनिक विसंगतियों को भी अपना निशाना बनाया है। यह सब करते हुए भी उन्होंने अपने चित्रों में कलात्मक गुणों को कतई कम नहीं होने दिया है।

अर्पिता सिंह अपने चित्रों में सतह पर रंगों का प्रयोग इस तरह करती हैं कि उसमें हमारे समय का तनाव साफ झलकता है। वे कैनवास पर अक्सर रंगों के एक–दूसरे पर थक्के से बनाती हैं जिससे एक तरह का टकराव और तनाव नजर आता है। रंगों में उनके यहाँ गुलाबी और नीले रंग का प्रयोग अधिक है परन्तु वे कई बार काले और सफेद रंग का भी प्रयोग करती हैं जो उनके आरम्भिक काम का मुख्य रंग रहा है। जलरंग चित्रों में भी वे अक्सर इसी तकनीक का इस्तेमाल करती हैं, बस वहाँ रंग अक्सर धूमिल रंगत वाले होते हैं। अर्पिता सिंह की कला शिक्षा के समय से ही भू–दृश्यों में गहरी रुचि रही और इसीलिए वे शैलोज मुखर्जी की प्रिय छात्रा भी रहीं। उनके शुरूआती अमूर्त चित्रों में भू–दृश्यों की ही संरचना थी जो बाद में उनके आकृतिमूलक कामों में भी जारी रही। इसीलिए वे प्रत्येक चित्र को एक मानवीय भू–दृश्य की तरह संयोजित करती हैं।

अपने चित्रों में वे विषय के अनुरूप अक्सर घरेलु चीजों को प्रतीक के रूप में रचती हैं परन्तु इसे विड़म्बना ही कहा जाएगा कि ज्यादातर कला आलोचक उनके काम को स्त्री को केंद्र में रखकर ही देखते रहे हैं। और यही कारण है कि यह कह दिया जाता है कि उनके काम में समाज और परिवार में महिलाओं की स्थिति को व्यक्त



किया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि उनके आरम्भिक काम कें स्त्री केंद्र में होती थी जो कि स्वाभाविक भी है। यह सीधा–सीधा निजी अनुभवों का मामला था। एक पुरुष प्रधान समाज में एक स्त्री को कई तरह की विरोधाभासी स्थितियों से गुजरना पड़ता है जिसे एक स्त्री अधिक बेहतर तरीके से समझ सकती है। अर्पिता सिंह के साथ भी यही बात कही जा सकती है परन्तु केवल एक महिला चित्रकार होने के कारण उनके कला–जगत में जो पुरुष आते हैं उन्हें नजरअंदाज कर दिया जाना न्यायोचित नहीं जान पड़ता। और यह बात इसलिए भी जरूरी जान पड़ती है कि वे महिला और पुरुष कलाकार जैसे विभाजन को स्वीकार नहीं करती हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं कि एक पुरुष जहाँ चीजों को दिमाग से अधिक देखता है वहीं एक महिला उन्हें दिल से देखती है। महिलाओं को अधिक संवेदनशील माना जाता है जो कई बार उनकी सीमा भी बन जाती है। परन्तु अर्पिता सिंह पर यह बात लागू नहीं होती क्योंकि वे अपने समय और समाज को एक स्त्री की संवेदनाओं के साथ–साथ बौद्धिक स्तर पर भी देखती रही हैं। इसका परिणाम वे चित्र हैं जिनमें वे अपने समय की सामाजिक–राजनीतिक विडम्बनाओं पर टिप्पणी करती दिखाई देती हैं।



इसका प्रमाण उनके बाद के कामों में घरेलू चीजों के अलावा प्रमुखता से आये हथियार, कारें, हवाई जहाज, सैनिक और अक्सर झाड़ियों के पीछे छिपे हत्यारे हैं जो कहीं बैठे या जा रहे लोगों पर निशाना लगाये होते हैं। यहीं वह एक साथ बचपन की स्मृतियों के खिलौनों की जगह हथियारों, कारों, हवाई जहाज, गुलदस्ते आदि को अपनी परिपक्व कल्पना के साथ मिलाकर पेश करते हुए एक वृहद् समकालीन सरो. कार को रचती नजर आती हैं। इसी का विस्तार उनके वे चित्र हैं जिनमें उन्होंने महानगरों की संरचनागत विसंगति और उसमें व्याप्त सामाजिक अन्याय पर भी एक कलात्मक टिप्पणी की है। ऐसे ही एक चित्र में उन्होंने दिल्ली को केंद्र में रखते हुए एक साथ प्रशासनिक, राजनीतिक और सामाजिक विसंगतियों को रचा है। इस बड़े आकार के चित्र में उन्होंने जो दिल्ली के विकास के विरोधाभासों को अभिव्यक्ति दी है वह किसी भी बड़े शहर या किसी भी देश की राजधानी का अक्स हो सकता है क्योंकि आज वैश्विक स्तर पर देखें तो हालात हर जगह कम या अधिक एक जैसे ही नजर आते हैं।

समय के साथ बदलते संदर्भ भी उनके यहाँ कम नहीं हैं। एक तरफ वे जीवन पर बढ़ते बाजार के दबाव को 'दो खरीदो दो फ्री' जैसे चित्रों में व्यक्त करती हैं तो दूसरी तरफ 'विश ड्रीम' जैसे म्यूरल में एकसाथ हमारे समय की भौतिक और सांस्कृतिक आकांक्षाओं को आकार देती हैं। इसी प्रकार प्रार्थना, क्लासिफाइड फाइल, क्लासिफाइड विज्ञापन, ब्रेकफास्ट जैसे कई साधारण विषयों को भी वे अपने कला जगत में जगह देती हैं। इसी के साथ उनके काम में इधर कई शब्द अपने पूरे या अधूरे रूप में आते हैं तो कई अंक भी जगह पाते हैं परन्तु वे केवल प्रतीक भर न रह कर उस भू–दृश्य का आधार बन जाते हैं जिसमें कलाकार ने एक कहानी को रचा है। एक कलाकार के रूप में वे जीवन को समग्रता में देखती हैं इसीलिए उनके यहां अक्सर इकहरी छवियां नहीं मिलतीं। किसी चित्र में एक आकृति के अकेले होने के बावजूद वे उसके आसपास ऐसा वातावरण रचती हैं कि वह अकेली न रह कर एक व्यापक समुदाय का प्रतिनिधित्व करती प्रतीत होती है।

अर्पणा कौर : रुहानी प्रेम की कला

दिल्ली में 1954 में जन्मी अर्पणा कौर की कला दो धरातलों पर सक्रिय कही जा सकती है। एक तरफ उसमें हमारे समय की लहुलुहान सच्चाइयां हैं तो दूसरी तरफ प्रेम की स्थापना और आध्यात्मिक विरासत के व्यावहारिक पक्ष हैं। रुहानी प्रेम की अभिव्यक्ति शरीर के माध्यम से ही संभव है इसलिए शरीर यानी मनुष्य लगातार अर्पणा कौर की कला के केंद्र में रहता है। वैसे भी उनकी कला में जो रुहानी प्रेम है, आध्यात्म है, वह वायवीय न होकर सांसारिक है, और व्यावहारिक भी। कबीर और नानक के उपदेशों का जो व्यावहारिक और सामाजिक पक्ष है वह अधिक महत्वपूर्ण है जिसे अर्पणा कौर अपनी पेंटिंग्स में





लगातार सामने लाती रहती हैं। दुनियावी मसलों से जूझते हुए इंसान क्या है और क्या होना चाहता है, इसकी तरफ भी वह संकेत करती दिखाई देती हैं। सोहनी की कहानी हो या वृंदावन की विधवाएँ या





समय को बुनती व काटती स्त्री, यह सब जैसे समय–समाज को एक नये रूप में देखने की मांग करते हैं।

अर्पणा कौर के रचना संसार में सोहनी हो या गुरुनानक, कबीर या फिर बुद्ध, यह सब जब कैनवास पर आते हैं तो सांसारिक रूप में ही आते दिखाई देते हैं। अलबत्ता उनकी उपस्थिति जिन दूसरे अवयवों और प्रतीकों के साथ होती है, वह उन्हें नया अर्थ देते हैं। इंसान की आत्मा या रूह सबसे अधिक पवित्र और अक्षुण होती है। इस रूह को इस संसार में किसी न किसी देह के आवरण में ही आना होता है। और जब वह देह के आवरण में आती है तो उसे सांसारिक स्थितियों का सामना भी करना पडता है जिनसें अच्छी और खराब, दोनों स्थितियाँ होती हैं। अर्पणा कौर इन सांसारिक स्थितियों की गवाही को अपनी कला में कुछ अलग तरह से दर्ज करती हैं। वह अपनी कला में समय की गति, उसकी धड़कन को तो केंद्र में रखती ही हैं, साथ ही जो कुछ विनाशकारी है, अयाचित है, उसका प्रतिकार भी रचती हैं। वह स्त्री को समय को बुनते हुए और काटते हुए,

दोनों रूप में रखते हुए अपना अलग विमर्श तैयार करती हैं। युद्ध और दंगों की हिंसा का चित्रण उन्होंने किया है जो हमारे समय की ऐसी मानवीय भूलें हैं जिन्हें इंसान जानबूझ कर करता रहा है।



अर्पणा कौर की कला प्रेम की प्रतिष्ठापन की कला है। देश – दुनिया में व्याप्त घृणा और हिंसा के मुकाबले वह प्रेम, शांति और अध्यात्म को खड़ा करती हैं। अपनी कला यात्रा में अर्पणा कौर ने नानक, कबीर और बुद्ध के माध्यम से शारीरिक और मानसिक हिंसा से पीड़ित मनुष्य की पुकार को स्वर दिया है। सोहनी के माध्यम से प्रेम की प्रतिष्ठा की है। हीरोशिमा से लेकर इराक तक के युद्ध का रचनात्मक प्रतिरोध उनके यहाँ मिलता है। जीवन को बुनती और समय की सीमाओं को काटती स्त्री एक नया विमर्श बनाती है।



अर्पणा कौर की कला को देखें तो उनके यहां बड़ी संख्या में ऐसी पेंटिंग्स हैं जिनकी पृष्ठभूमि में काला रंग प्रयोग किया गया है। ऐसा कम ही कलाकारों के यहाँ देखने को मिलता है। काला रंग यदि अधिक हो तो वह शेष रंगों को खा जाता है, ऐसा माना जाता है। इसके बाद भी अर्पणा कौर ने यदि यह जोखिम उठाया है तो उसके पीछे स्पष्ट धारणा रही है। काला रंग अंधकार का प्रतीक है और उनकी कला अपनी पूर्ण शक्ति के साथ जीवन में व्याप्त सभी प्रकार के अंधकार के खिलाफ खड़ी दिखाई देती है।

दिन और रात एक सतत प्रक्रिया है। दिन में से रात निकलती है या रात में से दिन निकलता है, साबित कर पाना संभव नहीं है। एक उजाला है और दूसरा अंधेरा, एक का रंग सफेद है और दूसरे का



काला। कहा भी जाता है कि जीवन के दो ही वास्तविक रंग हैं, सफेद और काला, शेष रंग सिर्फ भ्रांति हैं जो इन्हीं दो रंगों में समाहित होते हैं। सफेद रंग शुद्ध ता का प्रतीक है पर काला रंग अधिक प्रभावशाली माना जाता है जो दूसरे रंगों को अपने प्रभाव से ओझल कर देता है। इसीलिए काले रंग को अध्यात्म और दर्शन से भी जोड़ कर देखा जाता है। काला रंग एक रहस्य है। अर्पणा कौर के यहां हमें अनेक चित्रों में काला रंग बहुलता में दिखाई देता है क्योंकि उनकी कला अध्यात्म और दर्शन के गलियारे में टहलती हुई जीवन के रहस्य को खोलने का प्रयास करती है। आध्यात्मिकता और दार्शनिकता को वह अक्सर उनके व्यावहारिक और यथार्थ रूप में चित्रित करती हैं। नानक और कबीर यथार्थ थे, सोहनी यथार्थ थी, लोक कलाएँ भी यथार्थ हैं, इन सबकों वह अपने समय के यथार्थ को सामने लाने के लिए अपनी कला में बरतती हैं। अर्पणा कौर की कला में अध्यात्म और दर्शन अलौकिक नहीं लौकिक है। समय को काटती या बुनती स्त्री समय के उस यथार्थ को काटती व बुनती है जो उसके जीवन का समय है, उसका यथार्थ है। अर्पणा कौर इस बात को ज्यादातर संकेत में कहती हैं। वृंदावन की विधवाओं या युद्ध व दंगों के चित्रण में उनके यहाँ कुछ विवरणात्मकता दिखाई देती हैं वरना तो वह आमतौर पर प्रतिकात्मक रूप से ही अपनी बात को रखती हैं।

अर्पणा कौर की पेंटिंग्स में कुछ रूपांकन लगातार आते रहते हैं। उनमें से एक है पैर जो जीवन में गतिशीलता के प्रतीक हैं। इसी प्रकार रोशनी का प्रतीक बल्ब भी उनके यहाँ कई बार आया है। कैंची उनकी पेंटिंग्स में तो आती ही रही है, उसे लेकर उन्होंने शिल्प की रचना भी की है। हीरोशिमा त्रासदी को लेकर उन्होंने एक इंस्टालेशन भी किया है। वैसे दुनिया के कई शहरों में उन्होंने म्यूरल भी बनाये हैं। इसी प्रकार ट्राफिक लाईट, प्रकार, स्केल आदि भी उनकी कला के लोकप्रिय मोटिफ हैं जिनके माध्यम से वह समय की सच्चाई को सामने लाती हैं।

गोगी सरोजपाल : एक विद्रोही कलाकार



उत्तर प्रदेश के छोटे से शहर न्योली में 1945 में जन्मी गोगी सरोजपाल ने राजस्थान के वनस्थली कला महाविद्यालय और लखनऊ कला महाविद्यालय, उत्तर प्रदेश से कला की शिक्षा प्राप्त की। उनकी रचनात्मक अभिव्यक्तियाँ सांस्कृतिक पहचान की खोज का परिणाम हैं विशेषरूप से, स्त्री के संदर्भ में। इसीलिए उनके यहाँ ऐसे संदर्भ मिलते हैं जो हमारे समय को व्यक्त करते हैं, उसकी तरफ संकेत करते हैं। उनकी कला हमारे समय का ऐसा दर्पण है जिसमें लैंगिक भेद और वर्जनाओं की परतों के बीच स्त्री के जीवन की अंधकारपूर्ण और उज्ज्वल छवियाँ दिखाई देती हैं। वह शुरु से ही विद्रोही स्वभाव की थीं। इसीलिए उन्होंने कला शिक्षा में उस समय प्रचलित पश्चिमी कला का विरोध किया और उसे त्याग कर भारतीय कला परंपरा को अप. ना आधार बनाने की पहल की। उन्होंने अपने चित्रों में गहरे और गाढ़े रंगों का प्रयोग किया जो उनके शिक्षकों को पसंद नहीं आता था, पर उन्होंने इसकी कभी परवाह नहीं की। वह एक स्वतंत्रचेता कलाकार थीं और जीवन भर वही बनीं रहीं।



आधुनिक भारतीय कला में पहली 'नारीवादी' महिला चित्रकारों मे से एक के रूप में देखी जाने वाली गोगी सरोजपाल ने लगातार महिलाओं की स्थिति और आंतरिक जीवन को अपना विषय बनाया है। महिलाओं का जीवन, उनकी इच्छाएँ और मजबूरियाँ, और उनकी

जटिल और जादुई दुनिया गोगी के विषय रहे हैं। अपने काम में, गोगी भारतीय मिथकों, दंतकथाओं और लोककथाओं के साथ ही पारंपरिक कलाओं से प्रेरणा लेकर आधुनिक कला को एक नयी दिशा देने का काम करती रही हैं। स्वतंत्रचेता स्त्री की विविध छवियों को उन्होंने रचा है। कामधेनु में स्त्री और गाय, किन्नरी में स्त्री और पक्षी और डांसिंग हॉर्स में आधी स्त्री व आधी घोड़ी, जैसी रचनाओं में उन्होंने भारतीय लघुचित्र कला के साथ ही पारंपरिक लोक कलाओं और मिथकों का प्रयोग करते हुए नई संकल्पनाओं को प्रस्तुत किया था।



लघुचित्र परंपरा गोगी को विशेषरूप से प्रेरित करती रही है। उनकी पेंटिंग्स में संरचना के स्तर पर हम इसे देख सकते हैं। पहाड़ी लघुचित्र परंपरा का उनपर विशेष प्रभाव रहा है। शुरु से ही वह विद्रोही स्वभाव की रहीं और उन्होंने पश्चिमी कला मानको तथा शैली का अनुकरण करने से इनकार कर दिया था। लघुचित्र



परंपरा से भी उन्होंने विद्रोह किया और उसकी श्रृंगारिकता को नकारते हुए ऐसी नायिकाओं को रचा जो नग्न या अर्धनग्न हैं और अपनी उपस्थिति से पुरुष सत्ता को पूर्ण करने की जगह अपनी सत्ता की घोषणा करती कही जा सकती हैं। लघुचित्रों की तरह उन्होंने अलंकरण की जगह साधारण वस्त्रों को प्रमुखता दी। चित्र के परिवेश में भी उन्होंने सजावट पर ध्यान कम ही दिया। उन्होंने वस्त्रों और आभूषणों की बजाय स्त्री के दैहिक उपस्थिति सौंदर्य को प्रधानता दी। इस तरह से उन्होंने स्त्री को एक सजावटी वस्तु मानने की मानसिकता पर गहरी चोट की।



अस्सी के दशक में गोगीजी ने जो पेंटिंग्स रचीं वह एक तरह से आत्मकथात्मक थीं। उनमें गोगीजी के अपने जीवन अनुभव अधिक व्यक्त हुए। स्त्री की शाश्वत छवि, जिसमें शुचिता व पवित्रता की काल्पनिक धारणाएँ प्रमुख रही हैं, स्त्री के लिए एक बंधन का काम करती रही हैं। गोगीजी ने इसके खिलाफ स्त्री की आकांक्षाओं, उसकी मानसिक और दैहिक प्रत्याशाओं को सामने रखने का साहस दिखाया। अस्सी के दशक में शुरु हुई यह प्रक्रिया आगे भी चलती रही। उन्होंने समकालीन बाजारवादी व्यवस्था में स्त्री की विज्ञापनी छवि को तोड़ने का साहस दिखाया। स्त्री सिर्फ प्रदर्शन की वस्तु नहीं है, उसमें भी आत्मा होती है, उसके भी सपने हैं, और सबसे बड़ी बात, उसे जीवन को अपनी तरह से जीने का अधिकार है, इस बात को उन्होंने कई तरह से अपनी कला में उभारने का काम किया।



गोगी सरोजपाल की कला में अभिव्यक्ति के स्रोत उनके अपने जीवन अनुभव और सांस्कृतिक पहचान रहे हैं। सांस्कृतिक रूप से उन्होंने शुरुआत में लघुचित्र परंपरा से संयोजन और रंग प्रयोग की



प्रेरणा लेकर काम किया। बाद में उन्होंने इसे त्याग कर अप. नी अलग शैली विकसित की जिसमें उन्होंने समकालीन जीवन के यथार्थ को उभारने के लिए कई तरह के प्रयोग किये। उनके यहाँ इस दौर में आकृतियों में किसी तरह का चमत्कार पैदा करने की कोशिश नहीं है, बल्कि वह आकारों और रंगों की साधारणता को अपनी शक्ति बनाती हैं। विरूपण का उन्होंने कभी सहारा नहीं लिया। स्त्री के सौंदर्य को उन्होंने समय का सौंदर्य बनाते हुए उसके अस्तित्व के महत्व को स्थापित करने का काम किया।

दिल्ली में ललित कला अकादेमी के क्षेत्रीय केंद्र कला कुटिर, गढ़ी में उन्हें काम करते हुए देखना एक अलग अनुभव रहा। हम दोनों के स्टूडियों पास–पास होने से अक्सर उनसे कला को लेकर बातचीत होती रहती थी। वह कहती थीं, एक कलाकार के लिए लगातार काम करना जरूरी है पर क्या और क्यों करना है यह जानना भी जरूरी है। कला का जीवन में स्थान कम नहीं होना चाहिए पर इसका अर्थ यह नहीं कि कुछ भी कूड़ा–करकट भरा जाए। वह कहती थीं कि कोई कला अच्छी या बुरी नहीं होती पर उसके होने का यदि कोई उद्देश्य नहीं है तो उसके होने का कोई अर्थ भी नहीं है। वह वरिष्ठ अवश्य थीं पर सबसे ज्यादा उनकी बैठकी युवाओं के साथ होती थी। दूसरों का काम देखना उन्हें पसंद था। उनकी खास हिदायत होती थी कि खुद को कमजोर मत करो, अपनी ताकत दिखाओ, और एक कलाकार की ताकत उसकी कला है। कुछ नया करो, और जो करो उस पर यकीन भी रखो। 27 जनवरी 2024 को दिल्ली में उनका निधन हो गया।

डॉ. अमृत कपूर



डॉ. अमृत कपूर की कला में आत्म–सजगता, सम्मिलन, और सामाजिकता का अद्वितीय संतुलन देखने को मिलता है। वह अपने चित्रों में रंगों की परतें, गहराई और उजास का ऐसा सम्मिश्रण प्रस्तुत करती हैं, जो जीवन के विविध आयामों को उजागर करता है। अमृत के कार्यों में एकल छवियों की अपेक्षा अनेक आकृतियों का संयोजन प्रमुख है,



जहाँ एक मानव आकृति दूसरी से जुड़ी होती है, जैसे वे परछाइयों का एक समूह हों। यह जीवन के सामूहिक अस्तित्व और आपसी निर्भरता का प्रतीक है, जो सामाजिक वातावरण और जीवन की संभावनाओं को दर्शाता है।

अमृत की कला को किसी एक शैली या विधा में सीमित करना उचित नहीं होगा। मानव आकृतियों के चेहरे की संरचना में अमूर्तता का मार्ग अपनाते हुए, वह शरीर और अन्य आकृतियों को सुनिश्चित आकार और स्पष्टता प्रदान करती हैं। यह यथार्थ और कल्पना का एक अद्भुत मेल है, जहाँ वास्तविकता और सृजनात्मकता का संगम होता है। इसके अतिरिक्त, वह अपने चित्रों में सौंदर्य और

विस्तार के लिए विभिन्न प्रकार के टेक्सचर और डिजाइनों का उपयोग करती हैं, जो उनके कार्यों को और अधिक गहराई और विविधता प्रदान करते हैं। अमृत कपूर की कला जीवन के सार और सामाजिक संबंधों को नए दृष्टिकोण से देखने की एक यात्रा है, जिसमें रंग, आकार, और संरचना के माध्यम से गहन आत्मीयता और सामूहिकता की झलक मिलती है।



अमृत कपूर की कला का एक पक्ष संबंधों में रागात्मकता का चित्रण है, जो जीवन की सबसे सुंदर और सूक्ष्म धुन का सजीव प्रतिबिंब है। उनकी कला में जीवन की गतिशीलता कई स्तरों पर प्रकट होती है। उनके स्थिर चित्रों में जिस तरह से मानव आकृतियों का संयोजन किया जाता है वह एनिमेशन का प्रभाव देता है। उनमें भावनाओं और रूपों की आंतरिक गतिशीलता स्पष्ट दिखाई देती है। यह



उसकी अनवरत गति का संगम होता है।

गतिशीलता एक प्रकार का भ्रम उत्पन्न कर सकती है, परंतु इस भ्रम के भीतर यथार्थ की झलक भी छिपी होती है।

अमृत के सभी चित्रों में मानवीय गतिविधियाँ प्रमुख भूमिका निभाती हैं। वे कल्पना की उड़ान भरती हैं, लेकिन इस उड़ान के साथ यथार्थ का गहरा मेल भी स्थापित करती हैं। यही कारण है कि उनके चित्रों में कल्पनाशीलता होते हुए भी यथार्थ की स्थितियों का बोध होता है। कल्पना उनके यहाँ यथार्थ की परतों को खोलने का काम करती है। जीवन के ठोस अनुभव और वास्तविकताएँ उनके यहाँ सजीव हो जाती हैं। इस प्रकार, अमृत कपूर की कला में जीवन की धड़कन और



जब कोई चित्रकार अपने चित्रों में मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं को व्यक्त करना चाहता है, तो वह केवल रंगों और आकारों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि चित्र के संपूर्ण संयोजन पर भी ध्यान केंद्रित करता है। इस संयोजन में सहायक तत्वों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि ये तत्व कलाकार की अभिव्यक्ति को अधिक स्पष्टता और गहराई प्रदान करते हैं, जिससे दर्शक उसकी सोच और संदेश को बेहतर तरीके से समझ सकें।. अमृत कपूर अपने चित्रों में सहायक तत्वों के रूप में अक्सर कमल, पक्षी आदि का उपयोग करती हैं। कमल पवित्रता और आध्यात्मिक उन्नयन का प्रतीक है, जबकि पक्षी स्वतंत्रता, अनंतता और जीवन में नए आयामों को पाने की आकांक्षा को दर्शाते हैं। इन प्रतीकों के माध्यम से अमृत जीवन के उन पहलुओं को उजागर करती हैं

जो शारीरिक और मानसिक बंधनों से परे जाकर स्वतंत्रता और आत्मिक उन्नति की ओर संकेत करते हैं।

अमृत की कला में इन प्रतीकों का प्रयोग न केवल दृश्य–सौंदर्य को बढ़ाता है, बल्कि उनके चित्रों में छिपे गहरे अर्थों को भी सहजता से दर्शकों तक पहुँचाने में मदद करता है। इस प्रकार, उनकी कला में सहायक तत्व अभिव्यक्ति के महत्वपूर्ण उपकरण बन जाते हैं, जो जीवन के पवित्र और स्वतंत्र पक्षों को सुंदरता और गहराई से सामने लाते हैं।



आत्मकथ्य

मैं मुख्य रूप से अमूर्त और अर्ध अमूर्त पेंटिंग करता हूँ जिनमें मैं आंतरिक चेतना को रंगों और विभिन्न आकारों के माध्यम से व्यक्त करती हूँ। मैं मानवीय भावनाओं के विभिन्न रंगों को प्रस्तुत करने के लिए प्रकृति के विभिन्न तत्वों का प्रयोग करती हूँ। मेरी रचनाओं का आधार मेरे अपने निजी और सामाजिक अनुभव हैं जिनमें जीवन की विभिन्न स्थितियां और मानवीय संबंध महत्वपूर्ण हैं। मैं अपनी कला में स्वतंत्रता और जीवन के नये आयामों की खोज को भी व्यक्त करती हूँ। **डॉ. अमृत कपूर**

डॉ. अमृत कपूर, कानपुर विश्वविद्यालय से ललित कला में डॉक्टरेट हैं। भारत और विदेश में 100 से अधिक प्रदर्शनियों में उनका काम प्रदर्शित हो चुका है। दिल्ली, मुंबई सहित अनेक शहरों में उनकी एकल प्रदर्शनियां हो चुकी हैं। आईफैक्स और ललित कला अकादमी के संग्रह में उनकी पेंटिंग शामिल हैं। देश–विदेश के अनेक निजी कला संग्रहकर्ताओं ने भी उनका काम अपने संग्रह में रखा है। आप दिल्ली में रहती हैं।

मो. 9810617117

Email: amritkap08@yahoo.com.in, amritkap08@yahoo.co.in

अनीता तंवर



अनीता तंवर वरिष्ठ कलाकार हैं जिन्होंने जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय के कला विभाग से कला की शिक्षा प्राप्त की है जहाँ उनके एक गुरु ए. रामाचंद्रन थे। अनीता की कला शुरु से ही स्त्री और प्रकृति के चारित्रिक गुणों में व्याप्त अंतःसूत्रों की तलाश और उनकी अभिव्यक्ति रही है।



इसीलिए हम पाते हैं कि उनकी कला में पुरुष लगभग अनुपस्थित है। वह एक तरह से स्त्री के संसार को नि. रापद देखती हैं या देखना चाहती हैं। प्रकृति का चरित्र है निरंतर दूसरों को कुछ न कुछ देते रहना। प्रकृति इसके बदले में मनुष्य से भी प्रतिदान की अपेक्षा रखती है, भले ही वह न मिले। इसी प्रकार एक स्त्री जीवन भर विभिन्न रूपों में जीवन को सिरजती रहती है। उसके सामने स्थितियाँ चाहे जैसी भी हों, वह अपना देय–दायित्व कभी भूलती नहीं है। जैसे प्रकृति कभी भी मनुष्य को देने में पीछे नहीं रहती। इसी से हम देखते हैं कि अनीता जी की कला में स्त्रियां हमेशा प्रकृति के निकट हैं क्योंकि स्त्रियाँ ही प्रकृति की रक्षा व संरक्षण

करती हैं। घरों में तुलसी चौबारों से लेकर वट और पीपल की पूजा तक, हर कहीं स्त्री प्रकृति के साथ अपने संबंध को अनेक भूमिकाओं में निभाती है।

अनीता तंवर के चित्र संसार में स्त्रियाँ घर की दहलीज में कैद नहीं हैं, वह हमेशा दहलीज से बाहर एक मुक्त वातावरण में दिखाई देती हैं। यह उनकी कला में स्त्री के संसार के विस्तार की अभिव्यक्ति है। इन चित्रों में कहीं दो सखियाँ बाग में टहलती दिखाई देती हैं तो कहीं वह फूल चुन रही होती हैं। फूल चुनना एक तरह से जीवन को चुनने की प्रतिकात्मक अभिव्यक्ति कही जा सकती है। अनीता के यहाँ प्रतीकों की कमी नहीं है। उनकी स्त्रियाँ ग्रामीण और शहरी, दोनों तरह की स्त्रियों की प्रतिनिधि कही जा सकती हैं जिन्हें हम उनके पहनावे से चिह्नित कर सकते हैं। उनकी पेंटिंग्स में जो फूल और पेड़–पौधे दिखाई देते हैं, या कमल–ताल है, वह भी दो भिन्न परिवेश को सामने लाते हैं। इसी तरह उनकी पेंटिंग्स में पक्षियों की उपस्थिति भी प्रतिकात्मक रूप में पर्यावरण चेतना का संकेत करती है।





अनीता तंवर की कला पर उस परिवेश का भी गहरा असर है जिसमें उनकी रचना का जन्म होता है। वह कई साल से ललित कला अकादेमी के क्षेत्रीय केंद्र गढ़ी, नई दिल्ली में काम कर रही हैं। गढ़ी केंद्र में पेड़–पौधे, पुष्प, पक्षी आदि वहाँ के वातावरण को अधिक जीवंत कर देते हैं। पेड़ों पर दौड़ती गिलहरियाँ एक अलग ही दृश्य प्रस्तुत करती हैं। अनीता के अनेक चित्रों में गिलहरी दिखाई देती हैं और पक्षी भी। इससे उनकी कला अधिक जीवंत बन जाती है।

स्त्री और प्रकृति के बीच की चारित्रिक समानता एक गहरे संबंध को दर्शाती है। स्त्री की संवेदनशीलता, सृजनात्मकता, और सहनशीलता उसे प्रकृति के निकट लाती है, जो खुद भी जीवन देने और उसकी रक्षा करने में सक्षम है। वृक्ष, फूल, और पत्ते जैसे प्रकृति के तत्व स्त्री के भावनात्मक और आध्यात्मिक संसार का हिस्सा बन जाते हैं। ये सभी तत्व अनीता जी की कला में शामिल हैं, जो स्त्री और प्रकृति को एक–दूसरे के पूरक के रूप में सामने आते हैं। अनीता जी इस संबंध को अपनी कला के माध्यम से गहराई से व्यक्त करते हुए स्त्री और प्रकृति के बीच के अंतःसूत्र को प्रमुख रूप से उभर कर सामने लाती हैं।

अनीता तंवर की पेंटिंग्स वास्तव में उनके जीवन और अनुभवों का प्रतिबिंब हैं। उनके काम पर प्रकृति के रंगों और सौम्यता का गहरा प्रभाव दिखाई देता है, जो उनके भीतर के स्त्रीत्व को उभारता है। जीवन के

सकारात्मक विचारों और अनुभवों के माध्यम से, वह अपनी कला में स्वयं को व्यक्त करने का एक अनूठा तरीका खोजती हैं जिसे वह कमल, पुष्प, गिलहरी आदि के रूपक से जोड़ती हैं। कमल को लेकर उन्होंने कई काम किये हैं जो पानी में होते हुए भी कभी डूबता नहीं है। उनकी पेंटिंग्स में वह संतुलन और स्थिरता स्पष्ट रूप से झलकती है, जो जीवन की चुनौतियों के बावजूद मनुष्य के उनसे उबरने की क्षमता को दर्शाता है।



बाग में फूलों से लदे पेड़ों के नीचे खड़ी स्त्री प्रकृति के साथ एक अलग संवाद की स्थिति में दिखाई देती है जिसमें प्रकृति को बचाने और संवारने में स्त्री की भूमिका का संकेत भी मिलता है। पर अनीता की कला यहीं तक सीमित नहीं रहती। पेंटिंग में पेड़ पर गिलहरी की उपस्थिति पेंटिंग के अर्थ को अलग दिशा में भी ले जाती है। गिलहरी स्त्री के अंदर कहीं दबी रह गई या दबा दी गई मासूमियत और चंचलता का बोध भी कराती है। यहाँ स्त्री और गिलहरी जैसे एक हो जाते हैं। अनीता की पेंटिंग्स में यह गिलहरी बार बार आती है, जैसे कहना चाहती है कि मैं बाहर ही नहीं स्त्री के अंतरमन में भी हूँ। अनीता अपनी पेंटिंग्स में स्त्री में मौजूद गिलहरी सी चंचलता और मासूमियत को सामने लाती हैं।



आत्मकथ्य

मेरे काम का केंद्र स्त्री और प्रकृति है जो हमेशा उदात्त भावना के साथ जीवन को सिरजती है। दुनियाभर में स्त्री की सामाजिक स्थिति से अलग उसके अंदर की स्थिति होती है जो उसके बाहरी रूप से अधिक शक्तिशाली होती है, और उतनी ही कोमल भी। मैं अपने काम में स्त्री को प्रकृति के निकट दिखाकर दोनों की चारित्रिक समानता को सामने लाने का प्रयास करती हूँ। मेरे काम में आने वाली स्त्रियां कमजोर नहीं हैं बल्कि वह किसी भी परिस्थिति में हार न मानने वाली हैं। मेरी पेंटिंग्स में स्त्रियों के आंतरिक संसार को दिखाने के लिए मैं उन्हें मित्र, बहन, माँ आदि के रूप में भी रचती हूँ। स्त्री हमेशा, स्थिति चाहे जितनी भी विपरीत हो, सकारात्म दृष्टिकोण के साथ जीती है। मेरे चित्रों में अक्सर स्त्रियां फूलों के साथ हैं। इसकी प्रेरणा मुझे अपने परिवेश से ही मिली है। मेरे चित्रों में लाल, पीला और नीला रंग अधिक है जिसकी प्रेरणा मुझे राजस्थान की संस्कृति से मिली है। मैं तैल रंग में ही काम करना पसंद करती हूँ।

अनीता तंवर का जन्म 1970 में हुआ। उन्होंने जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली से एमएफए किया है। वह अपनी पेंटिंग में महिलाओं के जीवन और प्रकृति के साथ उनके संबंधों को चित्रित करने के लिए जानी जाती हैं। अनीता ने ललित कला अकादमी, साहित्य कला परिषद, श्रीधरनी आर्ट गैलरी, धूमिमल आर्ट गैलरी और जहांगीर आर्ट गैलरी द्वारा आयोजित प्रमुख समूह शो में भाग लिया है। उन्होंने जहांगीर आर्ट गैलरी, मुंबई, त्रिवेणी आर्ट गैलरी और नई दिल्ली में ललित कला गैलरी में एकल प्रदर्शनियां आयोजित की हैं। उनकी कृतियाँ साहित्य कला परिषद – नई दिल्ली, राष्ट्रीय आधुनिक कला गैलरी, नई दिल्ली और भारत और विदेश दोनों में निजी संग्रहों में शामिल हैं। आप दिल्ली में रहकर कला साधना कर रही हैं।

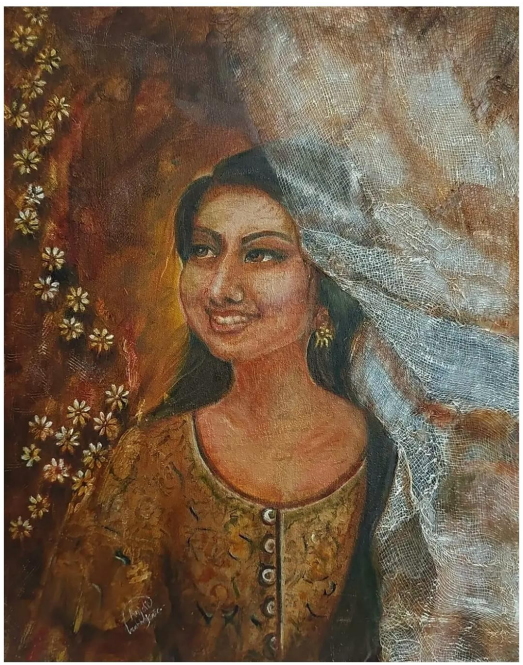


मो. 9810958364 Email: anita.artist2018@gmail.com

अंजली प्रभाकर



अंजली प्रभाकर की कला जीवन के गीतों की सजीव अभिव्यक्ति है, जो हमारे दैनिक जीवन के सुख और दुःख की विविध छवियों को प्रतिबिंबित करती है। उनकी रचनाओं में जीवन की जटिलताएँ और उसकी सादगी दोनों शामिल हैं, और वह अपने कैनवास पर इन भावनात्मक छवियों को आकार देती हैं, जिससे दर्शक अपने जीवन के गीत को पहचान और महसूस कर सकें। एक स्त्री होने के नाते, अंजली का दृष्टिकोण विशेष रूप से अनूठा और गहरा होता है, जिसमें उनके व्यक्तिगत अनुभव और समाज की वास्तविकताएँ, दोनों मिलकर एक सशक्त अभिव्यक्ति पाते हैं। उनके चित्रों में कोमल भावनाओं और यथार्थ की कठोरता के बीच संतुलन देखने को मिलता है, जिससे उनका काम व्यक्तिगत और सार्वजनिक अनुभवों के बीच की अद्वितीय कड़ी को दर्शाता है।



अंजली प्रभाकर की कला उनके जीवन के निजी और सार्वजनिक अनुभवों को दर्शकों के सामने लाती है, जहाँ हर व्यक्ति अपने अनुभवों के अनुसार उन गीतों में खो सकता है। उनके चित्रों में प्रतीकात्मकता का गहन उपयोग होता है, जो दर्शकों को एक गहन और सोचने पर मजबूर करने वाली यात्रा पर ले जाता है।

अंजली प्रभाकर की कला स्त्री जीवन के दो आयामी अस्तित्व की सहज व्याख्या है, जिसमें एक ओर सामाजिक जीवन की

जिम्मेदारियों का बोझ है, तो दूसरी ओर उसकी अपनी व्यक्तिगत आकांक्षाओं और इच्छाओं का संसार। उनकी पेंटिंग्स में कई बार दो स्त्रियों का चित्रण होता है, जो एक ही स्त्री के दो जीवन के प्रतीक हैं। ये चित्रण स्त्री के सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन के बीच संतुलन बनाने की उसकी कोशिशों का प्रतीकात्मक अंकन है। अंजली की रचनाएँ दर्शाती हैं कि एक स्त्री, चाहे वह कितनी भी कठिनाइयों से गुजरे, हमेशा खुद को और दूसरों को खुश रखने का प्रयास करती है। उसकी सृजनात्मकता न केवल एक माँ के रूप में, बल्कि एक मनुष्य के रूप में भी जीवन को आकार देने की उसकी क्षमता को दर्शाती है।



अंजली की कला में प्रकृति और जीवन के बीच गहरा संबंध देखने को मिलता है। वह प्रकृति से प्रेरणा लेकर जीवन को नए ढंग से रचने की आवश्यकता पर जोर



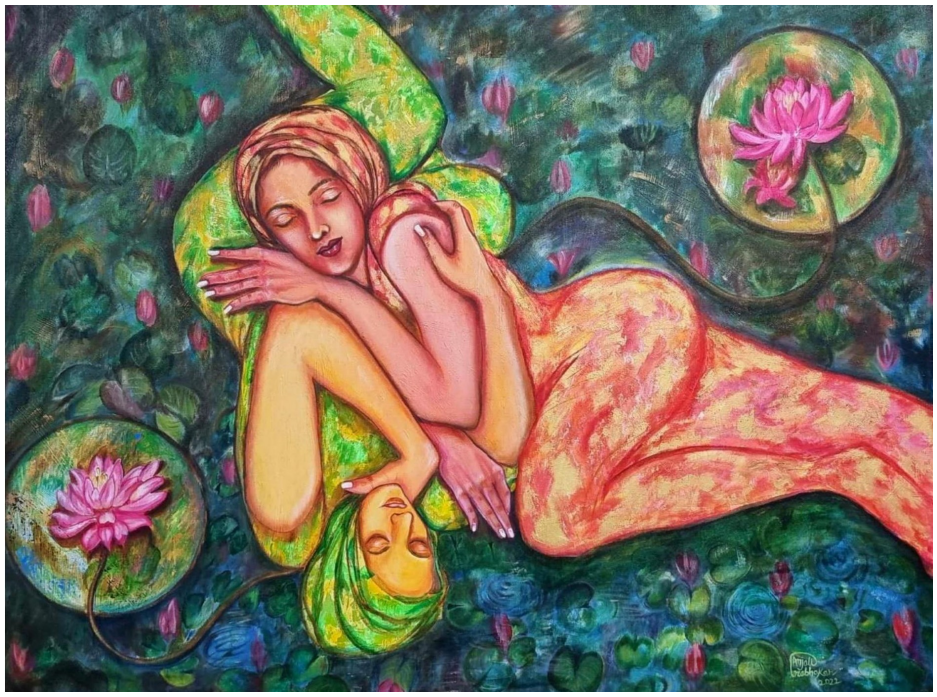
देती हैं। उनकी पेंटिंग्स में उल्लास और उदासी, दोनों के रंग समाहित हैं, जो जीवन के हर पहलू को दर्शाते हैं। अंजली ज्यादातर चटख रंगों का उपयोग करती हैं, जो जीवन की संभावनाओं और नई शुरुआत की ऊर्जा को व्यक्त करते हैं।

उनकी कला का एक महत्वपूर्ण पहलू आदिवासी और लोक कलाओं



के साथ समकालीन कला का अंतरसंबंध है। विशेष रूप से, वह मध्यप्रदेश की गोंड चित्रकला की पारंपरिक संरचनाओं को अपनाकर समकालीन जीवन को एक नई दृष्टि से प्रस्तुत करती हैं। यह उनके काम में मौलिकता लाते हुए उन्हें और भी खास बनाता है, क्योंकि वह इन पारंपरिक रूपों को नए संदर्भों में लाकर आधुनिक जीवन के सवालों से जोड़ती हैं। अंजली की कला में प्रकृति, स्त्रीत्व, सामाजिक जिम्मेदारियाँ और व्यक्तिगत आकांक्षाओं के बीच गहरा सामंजस्य देखने को मिलता है, जो उनके चित्रों को गहन अर्थ और संवेदनशीलता से भर देता है।

अंजली प्रभाकर की कला में स्त्री की मानसिक अवस्थाओं की गहराई और विविधता को बखूबी व्यक्त किया गया है, और इसका मुख्य कारण उनकी मनोविज्ञान की शिक्षा है। मानवीय भावनाओं को समझने और उसे सटीक रूप में चित्रित करने की उनकी क्षमता ही उनकी कला को विशिष्ट बनाती है। उनके चित्रों में स्त्री के चेहरे पर अनेक भावनाओं की झलक दिखाई देती है, जो जीवन की जटिलताओं और भावनात्मक उतार–चढ़ावों



का प्रतीक हैं।

अंजली जी के चित्रों की विशेषता यह है कि वह एक ही चेहरे पर कई भावों को व्यक्त करती हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि स्त्री न केवल एक ही समय पर विभिन्न भावनाओं का अनुभव करती है, बल्कि वह निरंतर बदलती मानसिक और भावनात्मक स्थितियों से गुजरती है। कभी उनके चित्रों में चेहरे पर सुकून और शांति होती है, तो कभी चिंता, दुःख, या विचारमग्नता। इस प्रकार, अंजली अपनी पेंटिंग्स में स्त्री के भीतर की मानसिक और भावनात्मक यात्रा को चित्रित करती हैं, जिससे दर्शक को न केवल बाहरी रूप से, बल्कि आंतरिक रूप से भी स्त्री के जीवन की समझ मिलती है। यह गहराई और भावनात्मक विविधता उनकी पेंटिंग्स को एक खास संवेदनशीलता प्रदान करती है, जो उन्हें मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से और भी प्रभावशाली बनाती है।

अंजली प्रभाकर अपने चित्रों में भावनाओं की गहन और प्रभावी अभिव्यक्ति के लिए केवल मुख्य विषय पर ध्यान केंद्रित नहीं करतीं, बल्कि एक समग्र वातावरण रचती हैं, जो उनके चित्रों को बहुस्तरीय अर्थ प्रदान करता है। मुख्य विषय के साथ–साथ वह पक्षी, सीढ़ियाँ, फूल, घड़ी, पेड़, पुस्तक, ताला–चाबी, और कमल जैसे प्रतीकों का प्रयोग करती हैं, जो उनके चित्रों में गहरी अंतर्निहित भावनाओं और विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रत्येक प्रतीक का जीवन संदर्भ अलग होता है और वह न केवल मनुष्य की भौतिक अवस्था को बल्कि उसकी मानसिक और भावनात्मक अवस्थाओं को भी व्यक्त करता है। उदाहरण के लिए, पुस्तक ज्ञान और विचारों की गहराई का प्रतीक हो सकती है, ताला और चाबी मानव जीवन की बंदिशों और संभावनाओं का प्रतीक हो सकते हैं, जबकि कमल शुद्धता और आध्यात्मिक जागरूकता को दर्शाता है।

अंजली जी इन तत्वों को इतनी कुशलता से संयोजित करती हैं कि उनके चित्रों में कई परतें और अर्थ प्रतिध्वनित होने लगते हैं। ये प्रतीक दर्शकों के लिए एक ऐसा अनुभव प्रदान करते हैं, जिससे वे अपनी व्यक्तिगत समझ और जीवन के अनुभवों के आधार पर चित्र के साथ जुड़ सकते हैं। प्रतीकात्मकता का यह समावेश उनके चित्रों को केवल देखने का माध्यम नहीं बनाता, बल्कि दर्शकों को चित्रों के भीतर छिपी भावनाओं और विचारों की खोज करने का एक नया रास्ता भी दिखाता है। उनकी कला में यह प्रतीकात्मक तत्व मानव जीवन के मानसिक, भावनात्मक और आधत्मिक पहलुओं को दर्शाते हैं, जो उनके चित्रों को एक व्यापक और गहरे संदर्भ में प्रस्तुत करते हैं।



आत्मकथ्य

मेरे लिए चित्र रचना जीवन को जीने का एक तरीका नहीं है बल्कि चित्र ही मेरे जीवन हैं। शुरु से ही मैं एक कलाकार बनने की इच्छा रखती थी। मैं अपनी कला के माध्यम से मानव की भौतिक से अधिक भावनात्मक स्थिति को सामने लाने का प्रयास करती हूँ, हालांकि जीवन के भौतिक पक्ष भी उसमें आते ही हैं। मैं अपने चित्रों में जीवन के सकारात्मक पक्षों को अधिक महत्व देती हूँ। मेरी कला एक तरह से मेरी खुद को खोजने की कोशिश भी है। **अंजली प्रभाकर**

बिहार में 1975 में जन्मी अंजली प्रभाकर ने स्वामी विवेकानंद विश्वविद्यालय, सागर, मध्य प्रदेश से फैशन डिजाइनिंग में मास्टर्स ऑफ आर्ट्स (एम.ए.) और शोभित विश्वविद्यालय, मेरठ से मानव संसाधन में एम.बी.ए. की डिग्री प्राप्त की है। वह वर्तमान में भोपाल, मध्य प्रदेश में रहती हैं। अपनी कला में वह महिलाओं की विभिन्न स्थितियो के साथ ही उनके आंतरिक संसार को विभिन्न प्रतीकों के माध्यम से सामने लाने का प्रयास करती हैं। देश और विदेश में कई एकल व समूह प्रदर्शनियां कर चुकी हैं। देश के विभिन्न कला संस्थानों द्वारा आपको सम्मानित किया जा चुका है। अनेक पत्र–पत्रिकाओं और पुस्तकों में आपके बारे में लेख प्रकाशित हो चुके हैं।

मो. 9425195496 Email: anjaliprabhakar75@gmail.com





आराधना टंडन

कला का गुण उसके रूप और अर्थ, दोनों का संतुलन है। एक चित्र सिर्फ रूप नहीं होता क्योंकि रूप उसे सुंदर तो बना सकता है पर प्रणवान नहीं। चित्र में प्राण आते हैं भावों की अभिव्यक्ति से। आराधना टंडन की कला रूप के साथ ही इस भाव को प्रमुखता से सामने रखती है। चंडीगढ़ की रहने वाली आराधना जी ने अपनी लंबी कला यात्रा में चित्रकला के तकनीकी पक्ष के साथ ही भाव पक्ष को इस तरह साध लिया है कि उनकी पेंटिंग पहली नजर में बांध लेती हैं और फिर धीरे–धीरे दर्शकों के दिल में उतर जाती हैं।

आराधना जी की कला स्त्री को केंद्र में रखकर प्रकृति और मानव संस्कृति के बीच के संबंध को नई अर्थवत्ता देती है। प्रकृति उनके चित्रों में पार्श्व में रहकर जैसे जीवन में अपनी रचनात्मक भूमिका को उजागर करती है। स्त्री जीवन की भौतिक और मानसिक स्थिति को आराधना जी प्रभावशाली तरीके से रचती हैं। उनकी कला में समकालीन कला की पद्धति के साथ ही भारतीय कला परम्परा के गुण भी समाहित हैं। कई पेंटिंग्स में उन्होंने स्त्री को पक्षी के साथ एकीकृत किया है जो भारतीय लोक कला से लेकर आधुनिक कला तक में दिखाई देता है।



आराधना जी की कला का केंद्र मानव आकांक्षाओं और सपनों की दुनिया है जो एक बेहतर दुनिया की संकल्पना के साथ आकार लेती है। पेंटिंग का केंद्र बिंदु स्त्री है पर वह समग्र मानवता का प्रतिनिधित्व करती कही जा सकती है। प्रकृति और अन्य जीवों के



सानिध्य से वह प्रकृति के साथ संतुलन को व्यक्त करती है। प्रकृति को वह उसके पूरे उजास के साथ रचती हैं।

आराधना जी की रंग योजना जीवन के उजले पक्ष को सामने लाती है। उनकी पेंटिंग्स में रंग उल्लास को जगाते हैं। महानगरीय संरचनाओं के साथ स्त्री की आकारिक उपस्थिति एक अलग वितान रचती है। यहाँ जीवन की धवलता है जो प्रमाणित करती है कि कला जीवन को देखने का एक सकारात्मक नजरिया जगाती है। यथार्थ के नाम पर जीवन के अँधेरे पक्ष आराधना जी के यहाँ नहीं मिलते।



उजासपूर्ण रंगों के माध्यम से आराधना जी जीवन की उल्लासपूर्ण छवियों को सामने लाती हैं। उनकी पेंटिंग्स में रंग उल्लास को जगाते हैं। जीवन की उदास छवियाँ उनके यहाँ नहीं है, हालांकि सुख और दुःख, दोनों ही जीवन के अंग हैं। पर यहाँ कलाकार अपनी कला के माध्यम से जीवन के सुखकर पक्ष को स्थापित करती कही जा सकती हैं। इसीलिए उनकी पेंटिंग्स एक तरह से जीने का उत्साह जगाती दिखाई देती हैं।

आराधना जी की पेंटिंग्स में अक्सर हम लोगों को एक–दूसरे से संवाद की स्थिति में देखते हैं। यह संवाद दो स्त्रियों के बीच तो है ही, प्रकृति और मनुष्य के बीच भी है जिसे व्यक्त करने के लिए वह स्त्री की आकृति को पक्षी की आकृति से एकीकृत कर देती हैं या फिर स्त्री को प्राकृतिक वातावरण में दिखाती हैं।

उनकी कुछ पेंटिंग्स में स्त्री को हम जैसे उड़ने की तैयारी में देखते हैं। कहीं वह भवनों के ऊपर खड़ी आसमान में चांद को पकड़ने का प्रयास करती दिखाई देती है तो कहीं अपने पंखों को फैलाने की तैयारी में दिखाई देती है। स्त्री की विभिन्न

अवस्थाओं को दर्शाने के लिए वह कई बार एक साथ दो–तीन आकृतियों का संयोजन करती हैं। अपने कुछ बड़े चित्रों में उन्होंने एक महानगरीय संरचना के बीच स्त्री, पुरुष और बच्चों के माध्यम से विभिन्न गतिविधियों को चित्रित किया है। इस चित्र की संरचना को देखें तो मनुष्य को इमारतों से बड़ा दिखाना कल्पनातीत प्रतीत होता है पर इसके साथ ही इसका एक और पक्ष है। कलाकार ने यह दर्शाया है कि मानव निर्मित संरचनाएँ कभी भी मनुष्य से बड़ी और महत्त्वपूर्ण नहीं हो सकतीं। एक तरह से कलाकार ने भौतिक संसार के मुकाबले में मनुष्य के होने को अधिक महत्त्वपूर्ण माना है।



आत्मकथ्य

कला करना मेरे लिए जीवन से संवाद करना है। जीवन की बगिया में इतने मनोहारी रूप खिले होते हैं कि उन्हें देखते ही मैं उनमें खो जाती हूँ। मेरे चित्रों में इसीलिए स्त्री को प्रकृति के साथ रागात्मक स्थिति में दिखाया है। इसके लिए मैं चमकदार रंगों का अधिक प्रयोग करती हूँ। कला मेरे लिए खुद से और दूसरों से संवाद का माध्यम है। जैसे मैं अपने मित्रों से बात करते हुए अपनी भावनाओं और विचारों को साझा करती हूँ वैसे ही कैनवास से भी बात करती हूँ। इसीलिए मेरे चित्रों में उपस्थित पात्र भी अक्सर बातचीत की मुद्रा में दिखाई देते हैं। **आराधना टंडन**

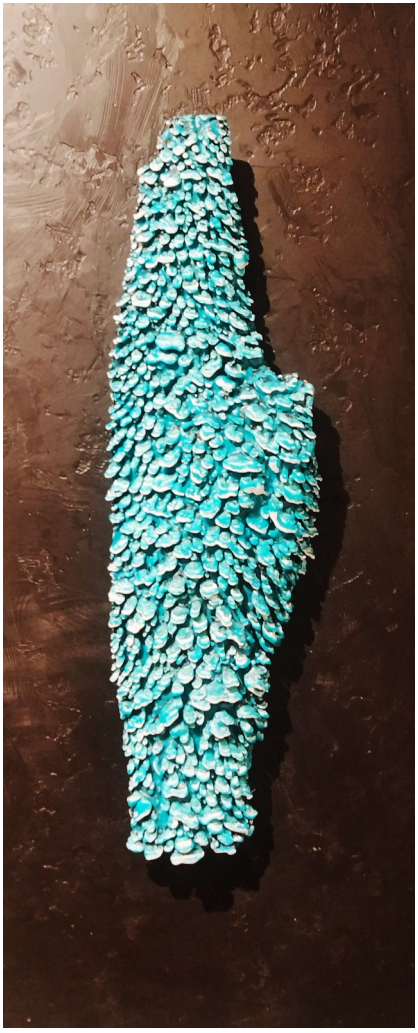
आराधना टंडन वरिष्ठ कलाकार हैं जो लगभग चार दशक के कला साधना कर रही हैं। एकल प्रदर्शनियों के अलावा उनका काम देश व विदेश में अनेक समूह प्रदर्शनियों में प्रदर्शित होता रहा है। मूलतः स्त्री और उसके जीवन के विभिन्न आयामों को वह अपनी कला में रचती हैं। आप चंडीगढ़ में रहकर कला कर रही हैं।

मो. 97790 64247

बी. जया लक्ष्मी



बी. जया लक्ष्मी अपनी कला के माध्यम से जीवन के सार–तत्व की खोज करती दिखाई देती हैं। इस खोज का प्रथम सोपान है दृश्यमान जगत की सीमाओं से मुक्ति। जो कुछ हम देखते हैं या देख सकते हैं वह हमारे अनुभवों को सीमित करता है क्योंकि दिखाई देने वाली दुनिया हमें दृश्य से आगे जाने से रोकती है। एक कलाकार इस सीमा को तोड़कर अपनी कला के माध्यम से देखने की क्रिया को अनुभूतियों और संवेदनाओं के मुक्ताकाश में बदल देता है और स्वयं के साथ ही दर्शक के लिए भी दृश्य से मुक्त होकर भाव जगत में विचरण की संभावना को जन्म देता है। इसीलिए यह माना जाता है कि अपनी कला के माध्यम से कलाकार जीवन को उसकी सीमाओं से मुक्त करता है। मनुष्य के रूप में हम जितना अधिक जीवन के बारे में सीखते हैं, हम उतने ही अधिक उलझन में पड़ जाते हैं। एक कलाकार अपने काम में इस अस्पष्टता को दूर करने का प्रयास करता है। इस प्रयास में, वह जीवन के उन दूरगामी अर्थों तक पहुँचने का प्रयास करता है जो सामान्य दृष्टि के दायरे से परे हैं। इसके लिए, कलाकार दृश्यमान छवियों से दूर जाकर अमूर्त छवियाँ बनाता है। लेकिन अमूर्त का आधार जीवन ही है, जिसे हम विभिन्न रूपों में देखते हैं। जब एक कलाकार पाता है कि दृश्यमान रूप उसकी अभिव्यक्ति के लिए अपर्याप्त हैं, तो वह



जीवन को अलग तरीके से देखने का प्रयास करता है। इस प्रयास में, वह अपनी कल्पना द्वारा बनाई गई अपरिचित छवियों को खोजता है। बी. जया लक्ष्मी की कला भी यही करती है। जीवन को समझना और जीवन को उसकी सीमाओं से मुक्त करने का प्रयास उनकी कला में देखा जा सकता है।



बी. जया लक्ष्मी की कला बाहरी दुनिया के अनुभवों की अंतःक्रियाओं की अभिव्यक्ति है। हमारी भावनात्मक दुनिया बाहरी दुनिया के अनुभवों से हमारे मन पर पड़ने वाले प्रभावों से आकार लेती है। हमारी सभी क्रियाएँ और अंतक्रियाएँ इन्हीं भावनाओं के अनुसार आकार लेती हैं। एक कलाकार के रूप में, हम इन अंतक्रियाओं को विभिन्न कला रूपों में व्यक्त करते हैं। बी. जया लक्ष्मी कांक्रिट के जंगलों में बदल चुके शहर के बीच प्रकृति के उन रूपों को याद करती हैं जिन्होंने उनके भाव जगत में स्थाई घर बना लिया है। प्रकृति की सुंदरता के मुकाबले उन्हें महानगरीय कृत्रिमता महत्त्वहीन लगती है। इसीलिए वह अपनी पेंटिंग और शिल्पों में प्रकृति के हमेशा नवीनता





और सृजन के चरित्र को रचती हैं। उनकी पेंटिंग्स को देखें तो लगता है जैसे कैनवास पर सौंदर्यपूर्ण शांति फैल गई हो। दिल्ली समेत कई शहरों की व्यस्त जीवनशैली के बीच इस शांति को बनाना और पाना एक कलाकार की आकांक्षा है। उसने कैनवास पर वैसा ही जीवन रचा है जैसा वह सोचती और चाहती हैं। जब भी आप जया से मिलेंगे, तो आप उन्हें हमेशा मुस्कुराते और उत्साह से भरपूर पाएँगे। उनका बाहरी व्यक्तित्व ही नहीं, आंतरिक व्यक्तित्व भी ऐसा ही है जिसका प्रतिबिंब हमें उनकी कला में साफ दिखाई देता है।

जया लक्ष्मी की कला की एक विशेषता यह है कि वह हजारों साल पुरानी एनकॉस्टिक तकनीक को नये सिरे से खोजती–रचती हैं। एनकॉस्टिक तकनीक में कलाकार मोम में रंग मिलाकर काम करता है। इसमें मोम में रंग मिलाने के बाद सतह पर लगाया जाता है और फिर उसे तपाया जाता है। इस प्रक्रिया में मोम को लगाने के दौरान ब्रश व स्पेचुला से बनने वाले असमतल निशान विलीन हो जाते हैं और सतह पर मोम के साथ रंग की कोमलता एक नया प्रभाव जगा देती है। जैसे–जैसे उनकी पेंटिंग्स में रंग एक–दूसरे में घुलते–मिलते हैं, वैसे–वैसे उनके काम में ऊर्जा का संचार भी होता है। सतह पर, यह डिजाइन जटिल लगती है लेकिन इस जटिलता में एक आकर्षण है। यह जटिलता पहले दर्शक को बांधती है और फिर धीरे–धीरे दर्शक को खुलने के लिए तैयार करती है। इसी से उनके अमूर्त चित्र जो भूदृश्य का प्रभाव



देते हैं, सौंदर्यपूर्ण अधिक होते हैं। मोम के कारण जो टैक्चर बनता है वह एक अलग आकर्षण उत्पन्न करता है। उन्होंने शिल्प रचना भी इसी तकनीक से की है। अपने शिल्पों में भी जया जी ने अमूर्तन और भूदृश्यात्मक संरचना का ही प्रयोग किया है। उनके यहाँ कई ऐसी पेंटिंग्स भी मिलती हैं जो दोआयामी शिल्प कहे जा सकते हैं।

परिचित प्रतीकों और कल्पना के माध्यम से वह सतह पर ऐसा परिदृश्य रचती हैं जो मन में सौंदर्यबोध जगाता है और जीवन के प्रति हमारा नजरिया बदल देता है। एक कलाकार अपने परिवेश में मौजूद सकारात्मक तत्वों का उपयोग करके स्थिर चित्रों में जीवंतता और गतिशीलता जगाता है। आकृतिमूलक काम करने वाले कलाकार वास्तविक दुनिया से मानवीय आकृतियों या प्राकृतिक दृश्यों के आधार पर कला की रचना करते हैं तो एक अमूर्त कलाकार अपनी कल्पना का उपयोग करके ऐसे चित्र बनाता है जो दर्शक को एक अलग दुनिया में ले जाते हैं। यह दर्शक को चित्र के परिदृश्य से दूर अपनी काल्पनिक दुनिया में जाने के लिए स्वतंत्र करता है। इस काम में कलाकार और रचना केवल एक माध्यम की तरह काम करते हैं। यह कलाकार की सबसे बड़ी शक्ति है जो दर्शकों को उनकी वर्तमान स्थिति



से मुक्त करने में मदद करती है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि जया की पेंटिंग्स को देखकर आगंतुक मुक्त महसूस करते हैं। इनमें से ज़्यादातर चित्रों में कोई स्पष्ट आकृति या उसका कोई संकेत भी नहीं है। कुछ परिदृश्यों में हमें जानी–पहचानी छवियाँ मिलती हैं। ज़्यादातर चित्र हमारी कल्पना को जगाते हैं। कभी उन्हें देखते हुए हमें हथकरघे की बुनाई का एहसास होता है तो कभी जिंदगी की जटिलताओं का एहसास होता है। कहीं यह खिड़कियों के बंद दरवाजों की तरह दुनिया की बाधाओं की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है तो कहीं यह दुनिया के खुलने की संभावना भी जगाती है। कुछ चित्र खिलते हुए फूलों की तरह चमकते हैं। कुछ में कोहरे में लिपटे परिदृश्य का आभास होता है। ये चित्र कई स्तरों पर दर्शकों की यादों को जगाते हैं।

आत्मकथ्य

मेरी कलात्मक अभिव्यक्ति मेरे छात्रों, मेरे आस–पास के लोगों और मेरी व्यापक यात्राओं से प्राप्त अनुभवों का प्रतिबिंब है। मैं अक्सर प्रकृति और उसकी प्रचुरता को चित्रित करता हूँ, जिसे मैं दिल्ली नामक कंक्रीट के जंगल में रहते हुए मिस करता हूँ। मेरा काम मोम, पौधे के राल और रंगद्रव्य से बने एनकॉस्टिक माध्यम से बनाया गया है। इन सामग्रियों के चरित्र को बदल पाना मुश्किल है। इस सामग्री और विधि में परिणाम कुछ हद तक अप्रत्याशित होते हैं जो मेरी कल्पना को नया आयाम देते हैं।

बी. जया लक्ष्मी

बी. जया लक्ष्मी का जन्म 1960 में दिल्ली में हुआ। 23 साल तक गणित और विज्ञान की शिक्षिका के रूप में काम किया पर पेंटिंग के प्रति जुनून के कारण उन्होंने खुद को पूरी तरह कला के प्रति समर्पित कर दिया। शांतिनिकेतन से संबद्ध एक संस्थान से पेंटिंग में डिप्लोमा करने के साथ ही उन्होंने चित्र व शिल्प कला की एक प्राचीन विधि एनकॉस्टिक का विदेशों में प्रशिक्षण लिया। भारत के अलावा अमेरिका में भी उनकी एकल प्रदर्शनी हो चुकी है। देश–विदेश में उनका काम प्रदर्शित होता रहा है।

मो. 9911613101 Email: jayab125@gmail.com

दीपा पटवारी



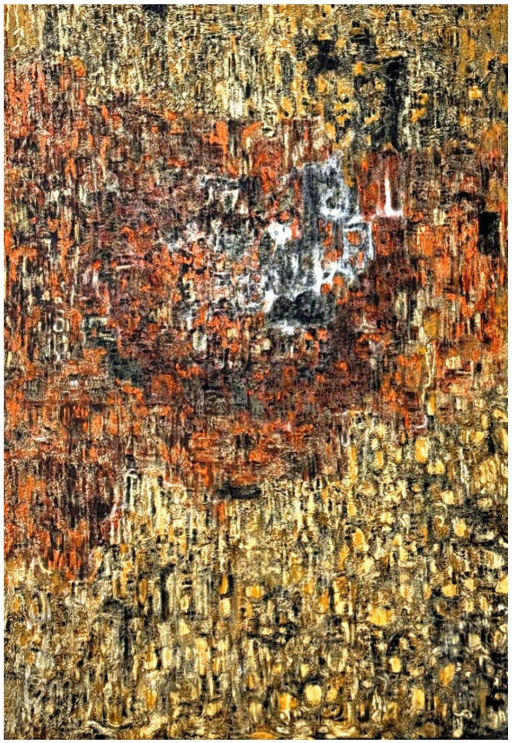
जीवन क्या है और क्यों है यह प्रश्न अध्यात्म और दर्शन में विमर्श का विषय रहा है पर एक कलाकार के लिए यह सवाल अधिक विकट होता है क्योंकि उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम कला है जिसमें कलाकार अपनी बात सांकेतिक रूप से ही व्यक्त कार पाता है। दीपा पटवारी ने इसके लिए अमूर्तन को चुना जो अधिक सांकेतिक होता है पर अर्थ के स्तर पर उतना हि बहुआयामी और गहन होता है। अमूर्तन में दर्शक के लिए हर रेखा, रंग और आकार में गहरे अर्थ छिपे होते हैं। अमूर्तन में कोई ठोस या स्थिर रूप नहीं होता, बल्कि कलाकार भावनाओं, विचारों, और गहन प्रतीकों के जरिए अपने दृष्टिकोण को सामने रखता है। दीपा के लिए प्रतीक के रूप में कैनवास पर रंग और कपास की बहुस्तरीय उपस्थिति है जो आकस्मिक रूप से कई जाने–पहचाने रूपों का आभास कराती है। यह बहुस्तरीयता उनकी कला में इस रूप में भी दिखाई देती है कि कभी वह रंगों की सघनता का प्रयोग करती हैं तो कई बार कैनवास पर एक रंग को अधिक विस्तार देती हैं। यह एक तरफ भावात्म स्थिति की विविधता को दर्शाता है तो दूसरी तरफ कला को कारीगरी बनने से भी बचाता है। दीपा अपनी कला में निरंतर यात्रा में रहती हैं, वह हमेशा कुछ नया खोजने का प्रयास करती हैं। उनके यहाँ संरचना के स्तर पर किसी विशेष रंग और आकार के साथ ठहरने की कोई संभावना नहीं है। एक तरह की गतिशीलता है जो कभी एक चित्र में दिखाई देती है तो कभी एक चित्र से दूसरे चित्र के अंतराल में। जीवन चक्र की तरह उनकी कला में अनजान आकार उभरते हैं और फिर विलीन भी होते दिखाई देते हैं। जीवन हमेशा रहता है पर व्यक्ति नहीं, हालांकि वह फिर किसी दूसरे रूप में जीवन चक्र का हिस्सा बनता है, दीपा के





चित्रों में यही घटित होता दिखाई देता है।

दीपा ने कला में प्रवेश करते समय काई और फफूंद सहित उनके जैसे दूसरे ऐसे पदार्थों से प्रेरणा ली जो प्राकृत्रिक प्रभाव से स्वतः जन्म लेते और फिर नष्ट भी हो जाते हैं। वह कहीं जाते नहीं हैं, वह फिर से वापस आते हैं, उसी जगह पर या किसी और जगह। बस उनका रूप बदल जाता है। मनुष्य का जीवन भी ऐसा ही है। यही जीवन चक्र है जिसे व्यक्त करने के लिए दीपा ने चित्रण के लिए अमूर्तन को चुना। धीरे–धीरे दीपा की कला में जीवन को लेकर उठने वाले अनेक सवालों के साथ चित्रण तकनीक में बदल. ाव आने लगा, हालांकि अमूर्तन उनका केंद्रीय सरोकार बना रहा। अमूर्तन की विशेषता यही होती है कि वह दर्शक के अनुभव, दृष्टिकोण और मानसिक स्थिति के आधार पर अलग–अलग व्याख्याओं की संभावना को बनाए रखता है। इसी बहुआयामीता और गहराई के कारण, जीवन जैसे जटिल प्रश्न को व्यक्त करने के लिए अमूर्त चित्रण अत्यंत उपयुक्त है।



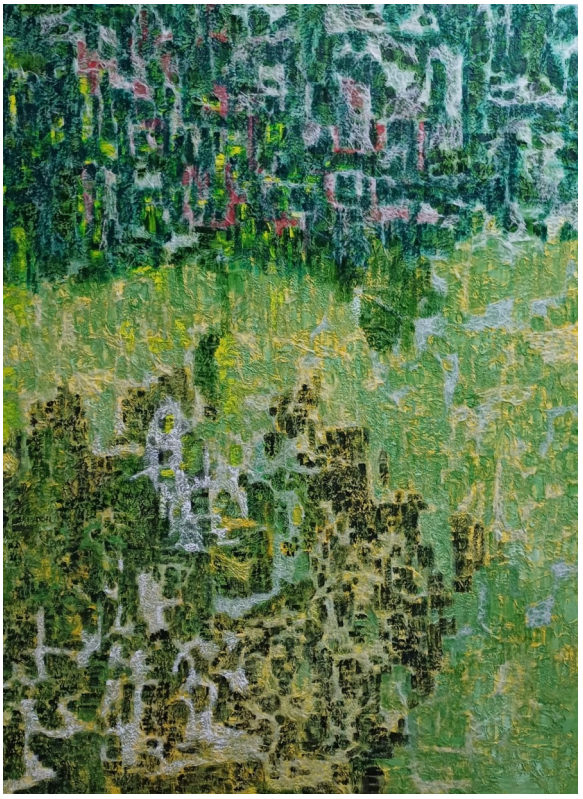




दीपा के लिए कला साधना केवल एक सरल उत्तर की खोज नहीं है, बल्कि एक यात्रा है जो अनेक अर्थों, सवालों और अनुभवों से भरी है। जीवन से संदर्भित सवालों को लेकर दूसरे कलाकारों ने अपनी तरह से काम किया है। कई कलाकार इसके लिए ज्यामितीय या दूसरे फॉर्म्स का इस्तेमाल करते हैं पर दीपा कैनवास को पूर्ण अमूर्तन की स्थिति में ले जाती हैं। एक तरह से उनकी कला दृश्य से अधिक विचार मंथन की दिशा में अग्रसर हो जाती है।

दीपा अपनी कला में दर्शकों के लिए कोई एक निश्चित उत्तर देने के बजाय, अनगिनत संभावनाओं के द्वार खोलने में विश्वास रखती हैं। जीवन की कई घटनाएँ और भावनाएँ स्पष्ट रूप से समझ में नहीं आतीं, जिन्हें दीपा अपने चित्रों में अमूर्तन की भाषा में अभिव्यक्त करती हैं।





उनकी चित्र भाषा और विधि इसमें सहायक होती हैं। जैसे जीवन को आकार देने के लिए मनुष्य कई स्तर पर काम करता है, भावनात्मक और भौतिक, दोनों स्तर पर, उसी प्रकार दीपा चित्र रचना में कला सामग्री के साथ भाव स्तर पर भी काम करती हैं। उनकी चित्र रचना विधि को देखें तो उसमें वह कैनवास पर रंग की एक परत लगाने के बाद कपास चिपकाती हैं। कपास को भी कैनवास के अलग–अलग हिस्सों में कम या ज्यादा परतों में लगाया जाता है। उसके बाद वह तैल रंग का प्रयोग करती हैं। इस प्रक्रिया में कपास से बना टैक्सचर चित्र में एक नवीन सौंदर्यबोध जगाता है। कैनवास पर रंग भी अलग–अलग हिस्से में कम या ज्यादा परतों में लगाया जाता है जिससे चित्र में गहराई आती है। इससे चित्र में कई ऐसे रूप भी उभर आते हैं जो परिचित लगते हैं या किसी परिचित रूप का आभास कराते हैं। दर्शक उन्हें देखते हुए अपने अनुभव और भावनाओं के अनुरूप अर्थ की अनेक दिशाओं में जाने के लिए स्वतंत्र होता है। इस तरह की चित्र रचना में कई बार अमूर्त भू–दृश्यों का आभास होता है जो उनकी कला में रहस्य को स्थापित करता है।

आत्मकथ्य

मेरे लिए कला हमेशा से ही जीवन के गहन रहस्यों को व्यक्त करने का माध्यम रही है। जीवन क्या है और क्यों है के साथ ही सृजन और विनाश की दार्शनिक तथा आध्यात्मिक अवधारणाओं में मेरी गहरी रूचि रही है। जन्म और मृत्यु के रहस्य को जानने के लिए मैंने आध्यात्म, दर्शन सहित अनेक विषयों का अध्ययन किया जिसने मेरी समझ को एक दिशा दी है। मैंने इन जटिल विचारों को दृश्य कथाओं में बदलने के लिए अमूर्त चित्रकला को अपने अभिव्यंजक रूप के रूप में चुना है। अपने तैल चित्रों में कपास और कपड़े जैसे तत्वों को शामिल करके, मेरा लक्ष्य ऐसे बनावट और चित्र बनाना है जो जीवन के रहस्यमय पहलुओं को उजागर करते हैं। **दीपा पटवारी**



दीपा पटवारी का जन्म असम में हुआ जहां उन्होंने कला की आरंभिक शिक्षा प्राप्त की। दीपा ने चित्रकला के साथ ही मनोविज्ञान की शिक्षा प्राप्त की है और फोटोग्राफी का कोर्स भी किया है। दीपा की इंडिया हैबीटाट सेंटर और इंडिया इंटरनेशनल सेंटर के साथ ही अन्य गैलरियों में एकल प्रदर्शनियां हो चुकी हैं। दीपा ने दिल्ली, गुरुग्राम, गुवाहाटी, चौन्नई, हैदराबाद सहित अनेक स्थानों पर समूह प्रदर्शनियों में भाग लिया है। इसके अलावा आप ने अनेक कला शिविरों में भी भागीदारी की है। स्टेट आर्ट गैलरी, तैलंगाना की वार्षिक प्रदर्शनी में आपको अवार्ड मिल चुका है। दो बार आपका चयन ललित कला अकादेमी की राष्ट्रीय प्रदर्शनी में हो चुका है।

मो. 9643273412

Email: christinaartgallery100@gmail.com

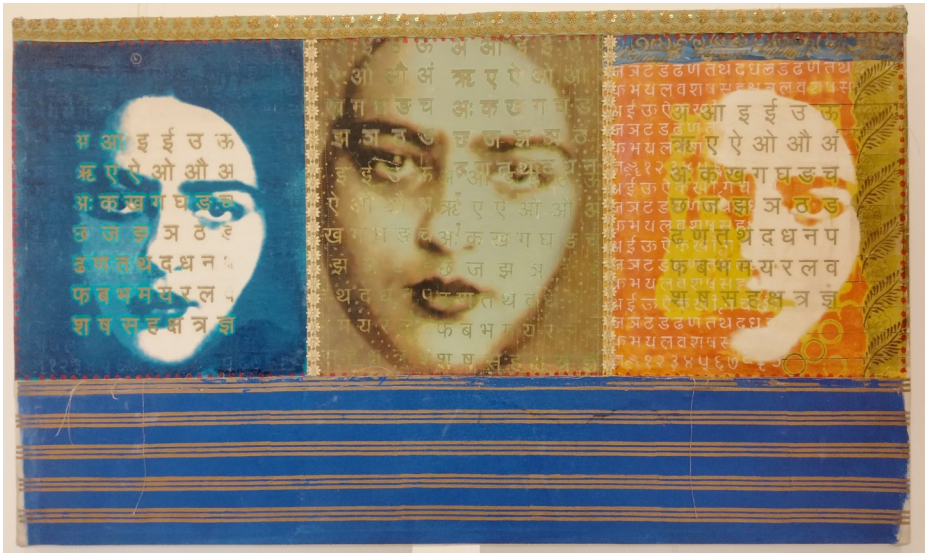
दुर्गा कैंथोला



दुर्गा कैंथोला अनेक विधाओं और माध्यमों में काम करने वाली कलाकार हैं, जो चित्रकला, प्रिंटमेकिंग, मूर्तिकला, इंस्टालेशन और डिजाइनिंग के क्षेत्र में सक्रिय हैं। उनका काम महिलाओं से संबंधित मुद्दों केंद्रित होता है, लेकिन व्यापक दृष्टि से देखें तो उनकी कला वर्तमान सामाजिक और सांस्कृतिक संघर्षों को देखने की एक आलोचनात्मक दृष्टि पर आधारित है। जेजे स्कूल और बडौदा स्कूल की सदस्य रहीं दुर्गा जी के लिए कला खुद को व्यक्त करने के साथ ही वर्तमान समय को लेकर एक समझ विकसित करने की प्रक्रिया है। समाज में व्याप्त हिंसा को लेकर उनकी कला अक्सर मुखर रहती है। अपने विचारों में एकदम स्पष्ट रहने वाली दुर्गा जी के लिए कला का उद्देश्य सामाजिक चेतना का विस्तार है।

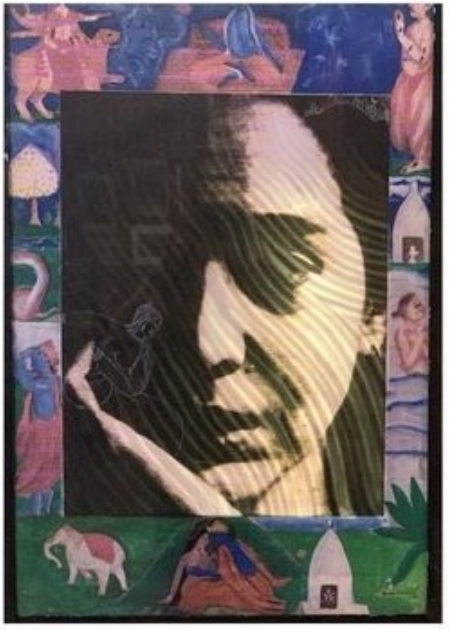


दुर्गा जी ने प्रिंट मेकिंग में अमृता शेरगिल, अर्पणा कौर



सहित कई लोकप्रिय व्यक्तित्वों की छवियों का प्रयोग किया है। पॉप आर्ट उनकी कला का एक अंग है हालांकि वह खुद को पॉप आर्टिस्ट कहलाना पसंद नहीं करती हैं। उनकी कला का एक आयाम मिनिमल आर्ट भी है जिसमें वह रचनात्मक स्तर पर न्यूनतम प्रतीकों और बिंबों का प्रयोग करती हैं। पॉप आर्ट के तहत वह बुनाई और दूसरी घरेलू तकनीकों का भी इस्तेमाल करती हैं।

दुर्गा जी ने लघुचित्रों की परंपरा का आधुनिक कला में विस्तार किया है। उन्होंने पेंटिंग्स और टेपेस्टरी जैसे माध्यमों में लघुचित्र शैली को केंद्र में रखकर समकालीन विमर्श रचा है। इसमें भी उन्होंने कढ़ाई व बुनाई जैसी पारंपरिक कलाओं को साथ लेकर कार्य किया है। इनमें उन्होंने लघुचित्रों की पारंपरिक छवियों के साथ समकालीन संदर्भों का प्रयोग किया है। स्त्री के प्रति होने वाली हिंसा को लेकर उन्होंने अनेक चित्र व शिल्प रचे हैं।



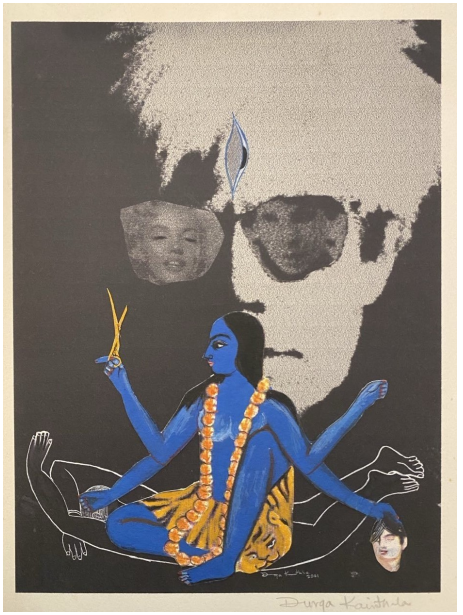
दुर्गा कैथोला की कला अपने विन्यास में जितनी सुंदर है अपने कथ्य में उतनी ही विचारशील भी है। उनकी कला में समकालीन जीवन के अनेक पक्ष दृश्य से परे संवेदना और विचार के रूप सामने आते हैं। स्त्री के प्रति बढ़ती हिंसा, सांस्कृतिक विचलन, राजनीतिक विरोधाभास और सामाजिक चरित्र उनकी कला में उस रूप में आते हैं जिन्हें लोग अक्सर देख नहीं पाते हैं। इस अनदेखी स्थितियों को



उजागर करने के लिए वह कई माध्यमों का सहारा लेती हैं। पेंटिंग और शिल्प में वह नए प्रयोग करती हैं। कैनवास या कपड़े पर प्रिंट लेकर उन पर काम करना इसमें शामिल है। अपने इंस्टालेश में वह कई तरह की सामग्रियों का प्रयोग करते हैं। सामग्रियों की विविधता उनकी कला के अर्थ को बहुआयामी बना देती है। वह बहुत सारी तैयार गैर पारम्परिक सामग्री का भी प्रयोग करती हैं। इस तरह वह चित्रों को कोलाज में बदल देती हैं।

दुर्गा जी की कला हमेशा समाज सापेक्ष रही है, वह कभी निरपेक्ष नहीं हो सकतीं। अपनी बात कहने के लिए वह एकदम स्पष्ट चित्रण का प्रयोग करती हैं। एक कलाकार अपने विचारों और भावनाओं के परिप्रेक्ष्य में ही कोई रचना करता है। यह परिप्रेक्ष्य कलाकार के जीवन के अनुभवों से निर्मित होता है। शुरु में कलाकार अपने भावों और विचारों को चाहे जिस रूप में व्यक्त करे पर एक समय आता है जब वह आलोचनात्मक दृष्टि के साथ रचना करता है। दुर्गा जी भी यही करती हैं, पर इसका अर्थ यह नहीं कि वह कला में कोई व्याख्यान देने लगती है या किसी तरह का कोई अंतिम निर्णय सुनाती है। वह सिर्फ





लोगों को जगाने का काम करती हैं, जिसके लिए वह समकालीन घटनाओं और प्रतीकों का प्रयोग करती हैं। कला हमेशा प्रतीकात्मक होती है इसलिए कलाकार भी अपनी बात प्रतीकात्मक रूप से ही कहता है, इसीलिए उसकी आलोचना भी प्रतिकात्मक ही होती है। वह अपने चित्र या शिल्प में उन स्थितियों, भावों और विचारों को प्रतिकात्मक रूप में रचते हुए उसमें आलोचना की संभावना का बीजारोपण करता है। कलाकार को जो कुछ कहना होता है वह अपनी कृति में कह चुका होता है पर साथ ही वह कृति के माध्यम से ऐसा वातावरण बनाता है जिससे तादात्म्य स्थापित होने पर दर्शक आलोचक की स्थिति में आ जाता है। ऐसा हमेशा नहीं होता, क्योंकि ज्यादातर दर्शक चित्र या शिल्प की सतह पर ही ठहर जाते हैं। केवल वह दर्शक



जो पहले से चेतन है, कलाकृति की सतह से हटकर उसकी अंतर्वस्तु में प्रवेश करता है। इस तरह कलाकृति दर्शक को आलोचक की स्थिति में ले आती है। यही कला की सापेक्षता है। कला हमेशा सत्य का संधान करने का यत्न करती है। दुर्गा जी द्वारा लिंकन और गांधी को एकसाथ दिखाना वैश्विक राजनीतिक यथार्थ को सामने लाता है तो टेराकोटा में बनाए मदर गॉडेस के शिल्प सांस्कृतिक और सामाजिक विचलन के प्रति आलोचनात्मक दृष्टि की मांग करते हैं।



आत्मकथ्य

मैंने हमेशा हर दशक में आने वाले बदलावों का स्वागत किया है। प्रौद्योगिकी हमेशा मुझे प्रेरित करती है और मैं अक्सर तकनीकी प्रगति के साथ अपने काम में कुछ जोड़ता या संशोधित करता रहता हूँ। मेरी प्रगति समय की प्रगति के साथ–साथ चलती है। पिछले दो दशकों में मेरे काम में हमेशा प्रौद्योगिकी (डिजिटल प्रिंटिंग) का प्रतिबिंब देखा गया है। मेरा मानना है कि हमारा काम हमारे व्यक्तित्व और परिवेश का प्रतिबिंब होता है, जो हमारे बड़े होने के साथ हमारे अनुभवों के साथ बढ़ता है। पिछले करीब तीन दशक से मेरे काम में सामाजिक संदर्भ अधिक हैं।

दुर्गा कैंथोला

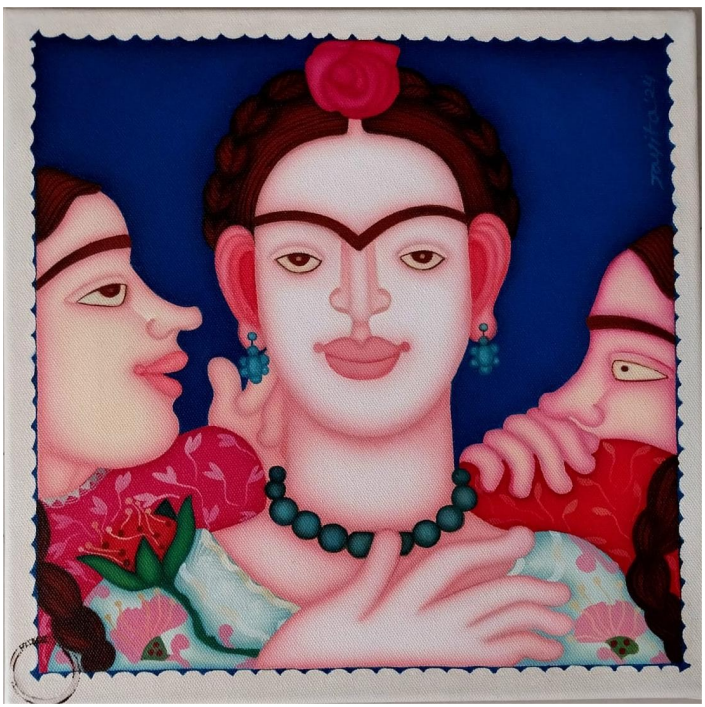
दुर्गा कैंथोला एक प्रसिद्ध भारतीय कलाकार हैं। 1962 में कोलकाता में उनका जन्म हुआ। उन्होंने 1987 में सर जेजे स्कूल ऑफ आर्ट, बॉम्बे (अब मुंबई) से बीएफए और 1989 में एमएस यूनिवर्सिटी, बड़ौदा से एमएफए किया। उन्होंने देश–विदेश की कई प्रतिष्ठित दीर्घाओं में अपने कामों की प्रदर्शनी लगाई है। 1995 में गैलरी रोमेन रोलैंड, एलायंस फ्रांसेइस, नई दिल्ली में उनकी पहली एकल प्रदर्शनी हुई थी। उनकी अब तक करीब 15 एकल प्रदर्शनियां हो चुकी हैं। उनके काम भारत, पोलैंड, यरुशलम, फ्लोरेंस, हांगकांग और रूस में कई अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शनियों में प्रदर्शित किए गए हैं। उनके काम भारत और विदेशों में कई निजी संग्रहों में हैं। वह कई पुरस्कारों और अंतरराष्ट्रीय नामांकनों की प्राप्तकर्ता हैं। वह दिल्ली में रहती हैं।

मो. 9818566682 Email: durgakainthola@hotmail.com

जयिता बोरठाकुर

जयिता बोरठाकुर की कला अपने आसपास के जीवन की कला है जिसमें उनके मित्र और दूसरे लोग शामिल हैं। अपनी कला में एकाकीपन का निषेध करते हुए वह सामूहिकता की भावना को स्थापित करती हैं। वह कहती हैं कि मुझे दोस्तों के साथ बैठना और चाय पीते हुए बातचीत करना अच्छा लगता है। यही मेरी कला का आधार है, यही मेरा विषय है। जयिता के कैनवास इसीलिए ऊर्जावान दिखाई देते हैं। एक समूह में बैठी स्त्रियों की भाव भंगिमा यह स्पष्ट करती है कि वह प्रसन्न हैं और बातचीत में पूरा रस ले रही हैं। अपनी पेंटिंग्स में वह इस वातावरण को बनाए रखने के





लिए शोख रंगों का अधिक प्रयोग करती हैं। वैसे भी रंग जीवन की विभिन्न स्थितियों को अच्छी तरह व्यक्त करते हैं। उनके चित्रों में अपनी बात कहने और दूसरे की बात सुनने की उत्सुकता चेहरों पर साफ पढ़ी जा सकती है। उनकी आकृतियों में लयात्मकता है, सौम्यता है, और वह प्रीतिकर हैं। स्त्रियों के दैहिक सौंदर्य को उभारते



हुए वह उनकी भाव भंगिमाओं से उनके आंतरिक सौंदर्य को सामने लाती हैं। इस तरह वह व्यक्तित्व के बाहरी और आंतरिक रूप की भिन्नता और महत्व को अलग तरह से रचती हैं।

अक्टूबर 20, 1967 को कोलकाता में जन्मी जयिता जी ने कला शिक्षा के साथ ही फोटोग्राफी का भी अध्ययन किया है। चित्र और फोटोग्राफी के अध्ययन ने उनकी पेंटिंग को अधिक प्रभावी बनाया है। स्त्रियों की आंतरिक दुनिया के बहाने वह मानवीय संबंधों को अलग तरह से बुनती दिखाई देती हैं। इधर पिछले कुछ समय से वह जिस सीरिज पर काम कर रही हैं उसमें उन्होंने मशहूर चित्रकार फ्रीडा काहलो को केंद्रीय विषय बनाया है। वह कहती हैं कि फ्रीडा अपने जीवन में अकेलेपन से जूझते हुए कला के साथ जो संबंध बनाती थीं, वह प्रेरणादायक है। फ्रीडा के साथ बिल्ली की उपस्थिति जयिता को अर्थपूर्ण लगती है। जयिता बोरठाकुर की कला यात्रा जीवंत रंगों और नाजुक स्ट्रोक के साथ आगे बढ़ती गई है। कोलकाता शहर की समृद्ध कलात्मक विरासत के बीच, उन्होंने कला की दुनिया को अपनाया और अपनी जीवंत कल्पना को कैनवास पर उतारा। जयिता कैनवास पर तैल रंग में काम करती हैं जिसकी कोमलता उनके काम को आकर्षक बनाती है।

जयिता की पेंटिंग्स सिर्फ दृश्य नहीं हैं, सामाजिक बंधनों की कथाएँ हैं, जो शोख और ऊर्जावान रंग योजना से जीवंत हो उठती हैं। मानवीय संबंधों की सरलतम आकांक्षा, संवाद उनकी रचनाओं को विस्तार देती है। वह

अपनी कला में दैनिक जीवन के उन पलों को संजोती हैं जिनमें लोग आपस में मिल–बैठ कर संबंधों को प्रगाढ़ता देते हैं, उन्हें जीवंत बनाते हैं। जयिता के चित्रों का केंद्र स्त्री जीवन है, शायद इसलिए कि सामाजिक संबंधों का भार उठाकर भी स्त्री किसी न किसी रूप में अकेलेपन की शिकार रहती है। वह अपने मन की बातों, भावनाओं को सबके साथ साझा नहीं कर पाती है। सामाजिक मर्यादाएँ इसमें बाधा बनती हैं। इसीलिए स्त्री को ऐसी सखियों की जरुरत होती है जिनके साथ वह मुक्त भाव से जी सके। उनकी पेंटिंग्स में इसीलिए हम देखते हैं कि स्त्रियाँ आपस में बातचीत करते हुए अत्यंत प्रसन्न दिखाई दे रही हैं। हर पेंटिंग रंगों से भरी हुई है, जिसमें गपशप, हँसी और प्रियजनों के साथ एक कप चाय साझा करने की सरल खुशी के पल समाहित हैं।



देश के अनेक शहरों में एकल व समूह प्रदर्शनियों में भागीदारी कर चुकीं जयिता के लिए आज भी कला एक अनवरत खोज है। वह कहती हैं कि मैं आज भी खुद को खोज रही हूँ। मैं खुद को खोजने के बहाने वह समाज खोज रही हूँ जिसमें स्त्री का जीवन उसकी इच्छा का वाहक हो। जयिता देश–विदेश में कला प्रदर्शनियों के साथ ही कला शिविरों में भी हिस्सा लेती रही हैं। इससे उनकी कला को एक अंतरराष्ट्रीय पहचान मिली है।

आत्मकथ्य

मेरी पेंटिंग्स सिर्फ दृश्य नहीं हैं, वे सामाजिक बंधनों की कहानियाँ हैं, जो चंचल और सकारात्मक रंगों से रंगी हुई हैं। मेरा काम जीवन के सरल सुखों, मानवीय संबंधों की गर्मजोशी और रोजमर्रा के पलों की खूबसूरती का जश्न मनाता है। मैं अपनी कला के माध्यम से आभासी दुनिया और आभासी संबंधों के दौर में उस सामाजिक जीवन को सामने लाती हूँ जो वास्तविक है। मानवीय संबंधों के मर्म को व्यक्त करना ही मेरी कला का सार है।

जयिता बोरठाकुर



जयिता बोरठाकुर का जन्म 20 अक्टूबर, 1967 को कोलकाता, पश्चिम बंगाल में हुआ। कलकत्ता विश्वविद्यालय से बीए और कोलकाता में कॉलेज ऑफ विजुअल आर्ट्स से ललित कला में औपचारिक प्रशिक्षण के साथ, जयिता की कला यात्रा शुरु हुई। अपनी करीब दो दशक से अधिक की कला साधना से उन्होंने अपनी अलग पहचान बनाई है।

मो. 8777295495

Email: borthaur.jayita@gmil.com



कामिनी बघेल

मनुष्य जीवन के सूत्र निजी और सार्वजनिक संबंधों से पोषित होते हैं। निजी संबंध जहां जीने की शक्ति देते हैं वहीं सार्वजनिक संबंध हमें जीना सिखाते हैं। कलाकार कामिनी बघेल अपनी पेंटिंग्स में इन्हीं संबंधों के ताने–बाने को बुनते हुए जीवन के वास्तविक अर्थ को तलाशने और व्यक्त करने का काम करती कही जा सकती हैं। उनके काम में माँ और बच्चा, पुरुष और महिला, दोस्त सभी रिश्तों के प्रतीक बनकर उभरते हैं। वह



छोटे शहरों और गांवों से आने वाली आम महिलाओं को चित्रित करती हैं। रूप की सादगी, सुंदर रंग और बनावट उनके चित्रों में आकर्षण पैदा करते हैं। उनकी पेंटिंग्स में अमूर्तन का गुण भी होता है, विशेषरूप से पृष्ठभूमि में। वह कई बार यथार्थवादी आकृतियों के खिलाफ अमूर्त या अर्ध–अमूर्त आकृतियाँ बनाती हैं, जो भ्रम और रहस्य को जन्म देती हैं। कामिनी की कला के विषय वास्तविक होते हैं जिनके माध्यम से वह सामाजिक जीवन के साथ ही हमारे समय के सांस्कृतिक मूल्यों को भी दर्शाती हैं, खासकर जब वह महिलाओं के जीवन को चित्रित करती हैं। 'उम्मीद', 'विचार', 'आकर्षण', 'माहौल', 'गपशप', 'प्रकृति के साथ जीवन' उनके कुछ शीर्षक हैं जो जीवन के विभिन्न पक्षों को सामने लाते हैं। हमारे शहरी और ग्रामीण जीवन में कई अलग–अलग पहलू हैं, उनमें से कुछ दिखाई देते हैं और बहुत से छिपे हुए हैं। एक कलाकार के रूप में, अगर हम उन्हें उजागर करने की चुनौती स्वीकार करते हैं, तो हमारी कला समृद्ध हो जाएगी। कामिनी उस चुनौती को स्वीकार करती हैं, अपने समाज के छिपे हुए सत्य को उजागर करने के लिए नहीं, बल्कि जीवन की सुंदरता को तलाशने के लिए, और यही वह चीज है जो उसकी कला को महत्वपूर्ण बनाती है।

अपनी करीब तीन दशक की कला यात्रा में कामिनी बघेल ने कई तरह के प्रयोग किये हैं। उनकी कला में निरंतर निखार आता गया है। अभी यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने कला में अपना सर्वश्रेष्ठ दे दिया है, अभी उन्हें बहुत कुछ करना है। वैसे भी उनका विषय 'मानवीय संबंध' इतना व्यापक है कि एक कलाकार चाहे तो जीवन भर उस पर ही काम कर सकता है। वह कहती भी हैं कि मैं इतने साल काम करने के बाद भी



विषय मेरे आसपास के जीवन के हैं। आज बहुत से भारतीय कलाकार विदेशी कलाकारों से प्रेरणा लेते हैं पर मुझे लगता है कि भारतीय कला के विभिन्न रूपों में बहुत कुछ ऐसा है जो समकालीन कला के लिए प्रेरणा का काम कर सकता है।

कामिनी की पेंटिंग्स में अक्सर दो या अधिक आकृतियाँ होती हैं, जिनमें से कुछ को प्रमुखता दी जाती है जबकि अन्य पृष्ठभूमि में हल्के रूप में उपस्थित होती हैं। इस प्रकार, उनकी कला में गहराई और कथा तत्व का समावेश होता है, जो दर्शकों को चित्रों में छिपे अर्थों और भावनाओं को खोजने के लिए प्रेरित करता है।

महसूस करती हूँ कि मानव संबंधों के विभिन्न आयामों को समझने और उन्हें पेंट करने का काम अभी पूरा नहीं हुआ है। कामिनी के पास अपनी बात करने की कला है और सलीका भी, जिसमें सादगी प्रमुख गुण है। उनकी पेंटिंग्स को देखें तो उनमें मानव आकृतियाँ एकदम सादगीपूर्ण हैं, रंगों के प्रयोग में भी सादगी दिखाई देती है। आमतौर पर वह तैल रंगों का प्रयोग करती हैं पर बीच–बीच में एक्रेलिक रंग में भी काम करती हैं। कला की प्रेरणा कहाँ से मिलती है, इस बारे में वह कहती हैं कि इसकी प्रेरणा मुझे शुरु में लोक कलाओं से ही मिली पर बाद में मैंने आधुनिक कला का अध्ययन किया। मेरे



अक्सर बातचीत की अवस्था में उनकी पेंटिंग के चरित्र दर्शकों के साथ भी एक संवाद स्थापित कर लेते हैं। दर्शकों को लगता है जैसे वह जिन्हें देख रहे हैं, चित्र में, वह उनके आसपास के ही लोग हैं। मानव आकृतियों को देखने से स्पष्ट होता है कि वह सब मध्यवर्ग के लोग हैं, विशेषरूप से ग्रामीण पृष्ठभूमि के हैं। हाल के वर्षों में, कामिनी बघेल की कला में एक स्पष्ट परिवर्तन देखा गया है। जहाँ पहले उनके चित्रों में व्यक्तिगत भावनाएँ अधिक प्रधान होती थीं, अब वे सामाजिक जीवन और सामूहिकता की ओर बढ़ती हुई प्रतीत होती हैं। यह बदलाव उनकी पेंटिंग्स में अधिक आकृतियों और कथात्मक विस्तार के माध्यम से स्पष्ट होता है।



रंगों के मामले में, कामिनी की पैलेट सीमित होती है, जिसमें वह एक ही रंग की विभिन्न शेड्स का उपयोग करती हैं। हरा, नीला, लाल और नारंगी उनके पसंदीदा रंग हैं, जिनके माध्यम से वे चित्रों में कोमलता और सौंदर्य का अनुभव कराती हैं। बीच–बीच में वह काले रंग में भी चित्र रचती रहती हैं। रंगों की कोमलता और चित्रों की परतें उन्हें एक अनूठा टैक्सचर प्रदान करती हैं, जो उनकी कला को और भी मनोहारी बना देता है।

कामिनी बधेल पेंटिंग्स में रंग की कई परतों का प्रयोग करती हैं। कई बार वह एक रंग के ऊपर दूसरे रंग की हल्की परत लगाती हैं फिर उसपर तीसरे रंग का प्रयोग करती हैं। इस तरह कई रंगों के प्रयोग से वह अलग रंग आभा को प्राप्त करती हैं। उनकी पेंटिंग्स में जो मानव आकृतियाँ हैं, उनमें सादगी है। उनकी रूप



सज्जा पर वह अधिक काम नहीं करती हैं। उनके चरित्र अक्सर घरेलू महिलाओं और लड़कियों के हैं जो मध्यवर्गी परिवार की दिखाई देती हैं। उनमें महानगरीय स्त्रियों के जीवन जैसी चमक–दमक नहीं है। पेंटिंग को किसी चमत्कार की तरह रचने की बजाय वह उसे भावनाओं के संचरण की दृष्टि से रचती हैं जिसके लिए सादगी उनका प्रमुख हथियार बन जाता है। जीवन की जटीलताओं को समझते हुए भी वह जीवन के सुंदर और सरल पलों को सामने लाती हैं। वह कहती भी हैं कि जीवन में बहुत सारी जटीलताएँ हैं, इसके बाद भी जीवन सुंदर है। कला का काम इस सुंदरता को बचाए रखना और उसे दूसरों तक पहुँचाना होना चाहिए। पेंटिंग दे खकर किसी को खुशी मिले तो उससे बड़ी कोई बात नहीं हो सकती। इस प्रकार, कामिनी बघेल की कला जीवन की जटिलताओं और भावनाओं का एक सुंदर प्रतिबिंब है, जो दर्शकों को अपने भीतर झाँकने और उन भावनाओं से जुड़ने का अवसर देती है। उनकी कला यात्रा उनके निरंतर विकास और प्रयोगधर्मिता का प्रमाण है, जो उनकी कला को हमेशा प्रासंगिक और प्रेरणादायक बनाए रखता है।

आत्मकथ्य

एक कलाकार के रूप में मैं अपनी पेंटिंग्स में अपने पारिवारिक और सामाजिक जीवन को चित्रित करती हूँ। इसके साथ ही मैं अपनी पेंटिंग्स में पर्यावरण संबंधी मुद्दों और पशु–पक्षियों के साथ हमारे संबंधों को भी चित्रित करती हूँ। मैं कला में जीवन के उन पलों को रचती हूँ जो हमारे जीवन को सुखमय बनाते हैं। मानवीय भावनाएँ और परस्पर मानवीय संबंध मेरे प्रिय विषय हैं। **कामिनी बघेल**

कामिनी बघेल का जन्म 1963 में हुआ। आपने खैरागढ़ और बॉम्बे आर्ट सोसाइटी से कला की शिक्षा प्राप्त की है। अपनी करीब तीन दशक की कला यात्रा में नई दिल्ली, झांसी, ग्वालियर, इलाहाबाद, जयपुर, मुंबई में आपने कई एकल शो किये हैं। भारत के अलावा अबू धाबी, मॉरीशस, रॉयल अकादमी लंदन में अंतर्राष्ट्रीय शो में भाग लिया है। कामिनी बघेल को रानी झांसी सम्मान सहित कई पुरस्कार प्राप्त हुए हैं।

मोबाइल. 9453703428 Email: Kaminibaghel@gmail.com

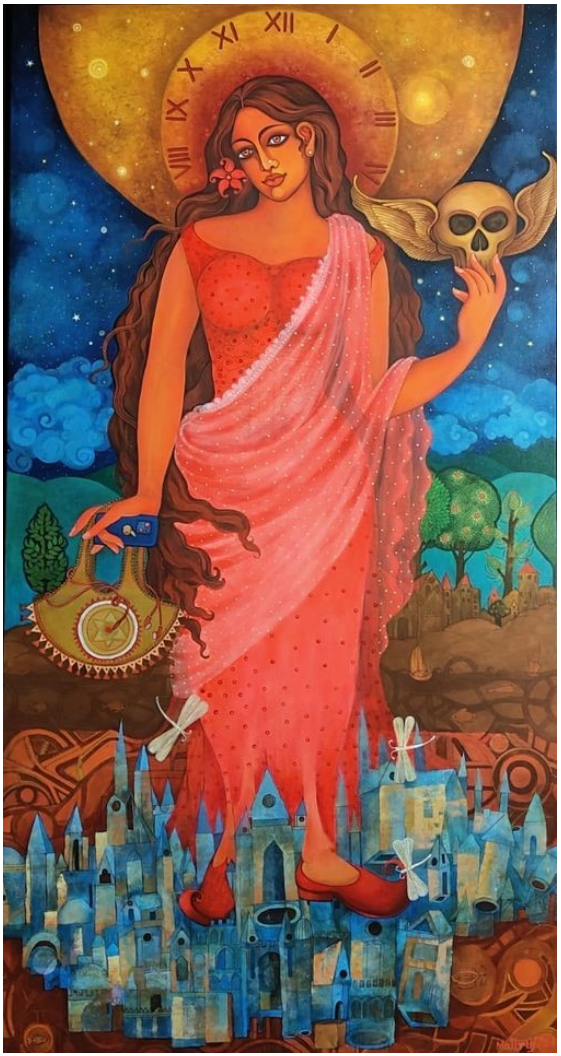
मैत्रेयी नंदी



भारतीय कला में स्त्रियों की जिन सशक्त छवियों की शुरुआत अमृता शेरगिल ने की थी, वह आज 21वीं शताब्दी में एक नये विमर्श के रूप में हमारे सामने है। पिछली शताब्दी में अर्पिता सिंह, अंजलि इला मेनन, गोगी सरोज पाल आदि ने कला के माध्यम से स्त्री की उपस्थिति को लेकर जिस विचार का बीजारोपण किया था, आज वह यथार्थ बन चुका है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था और धर्म ने स्त्री की आत्मा और देह को उसके अधिकार से बाहर ही रखा। हजारों साल तक स्त्री के लिए जीवन का अर्थ सिर्फ दूसरों के लिए, दूसरों की आवश्यकताओं के अनुरूप जीना था। बीसवीं शताब्दी के पूर्वाध ा में नारी मुक्ति आंदोलन ने पहली बार स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व को प्रमाणित करना शुरु किया था। 1960 के दशक में कुछ महिला कलाकारों ने कला में स्त्री की दैहिक उपस्थिति को भावनात्मक और मानसिक उपस्थिति में बदलना शुरु किया था। स्त्री की देह पर, उसकी आत्मा पर सिर्फ स्त्री का अधिकार है, और उसे अपने स्वतंत्र अस्तित्व के साथ जीने का अधिकार है, यह बात कला में मुखर होने लगी। आज करीब छह दशक बाद हम देखते हैं कि कला में स्त्री की उपस्थिति सौंदर्य से अधिक वैचारिक हो चुकी है। इसके लिए महिला कलाकारों को लंबा संघर्ष करना पड़ा है, जो आज भी जारी है। पर एक अच्छी बात यह है कि आज ऐसी महिला कलाकारों की संख्या पहले से अधिक है जो अपनी कला के माध्यम से अपने होने की घोषणा करती हैं, जो इस बात पर बल देती हैं कि 'मैं हूँ तो हूँ' और यह भी कि मेरा होना मुझसे है, किसी और से नहीं। मैत्रेयी नंदी की कला में यही स्वर मुख्य है। भारतीय समाज में, जहाँ अनेक तरह के सुध ारों के बाद भी स्त्री का जीवन दूसरों पर और दूसरों के लिए है, मैत्रेयी अपनी कला में अपने होने की प्रमाणिकता खुद से करती हैं। इतना ही नहीं, मैत्रेयी की पेंटिंग्स में पश्चिम की नारीवादी कलाकारों जैसी आक्रामकता नहीं है। वह केवल अपने अस्तित्व के विभिन्न आयामों को सामने रखती हैं।







स्त्री की स्वतंत्रता और उसके मानसिक व भावनात्मक अस्तित्व को केंद्र में रखकर कला करते हुए मैत्रेयी नंदी कला को निजी अभिव्यक्ति से सामाजिक सरोकार में बदल देती हैं। निजी के सार्वजनिक जीवन में बदल जाना उनकी कला की सहज घटना है। तमाम आधुनिकताओं और प्रगतिशील व्यवस्थाओं के बाद भी भारतीय समाज में सामाजिक व्यवहार की कई आदिम सीमाएँ उपस्थित हैं जिनमें हठवादी चरित्र और लैंगिक पूर्वाग्रह प्रमुख हैं। स्त्री जीवन में इन सीमाओं के प्रभाव को कला में व्यक्त कर पाना आसान नहीं है। एक कलाकार की भाषा का सबसे प्रभावशी. ली माध्यम प्रतीक और दूसरी सहायक संरचनाएं होती हैं जो कलाकार की भावनाओं और विचारों को जीवंत करती हैं। मैत्रेयी इसके लिए स्त्री की विविध छवियों के साथ ही ऐसे दूसरे प्रतीकों का प्रयोग करती हैं जिनसे वह अपनी बात प्रभावी तरीके से व्यक्त कर सकें। वह प्रतीक रूप में फूल, मछली, नाव, महानगरीय संरचनाएं आदि का प्रयोग करती हैं। अपनी बात को प्रभावी तरीके से सामने लाने के लिए वह कई बार मिथकों का भी प्रयोग करती हैं या स्त्री को किसी मिथक के समान चित्रिति करने का साहस दि खाती हैं। एक पेंटिंग में तो उन्होंने स्त्री को भीष्म पितामह की शरशैया वाली मुद्रा में रचा है। इस तरह उन्होंने स्त्री की स्थिति को एक ऐतिहासिक संदर्भ दे दिया है।

अपनी कला में वह स्त्री के लिए एक वर्जनामुक्त संसार की संकल्पना को सामने रखती हैं, एक ऐसा संसार

जिसमें स्त्री अपनी इच्छाओं, सपनों, आशा–निराशा, अपने डर के साथ जीने और उसे व्यक्त करने के लिए स्व. तंत्र हो। आज हम इक्कीसवीं सदी में हैं पर भारतीय समाज में आज भी शताब्दियों पुरानी पुरुषवादी सत्ता प्रभावी दिखाई देती है। स्त्री के लिए अपने मन और देह पर अधिकार के प्रश्न आज भी वर्जित हैं। मैत्रेयी अक्सर इन वर्जनाओं से अपनी कला में मुठभेड़ करती दिखाई देती हैं। इसके लिए वह किसी तरह के प्रतिशोध का रास्ता नहीं अपनाती हैं और न ही अपने चित्रों में स्त्री को किसी योद्धा की तरह दिखाती हैं। उनके कैनवास पर स्त्री अपनी स्वतंत्रता का उद्घोष अलग तरह से करती है। उनकी पेंटिंग्स में स्त्री अक्सर बाह्य और आंतरिक सौंदर्य के साथ मौजूद होती है। देह तो दिखती है पर आत्मा नहीं, इसलिए कलाकार के लिए मुश्किल हो जाता है देह और आत्मा के विभेद को स्थापित कर पाना। इसके लिए वह प्राकृतिक प्रतीकों का प्रयोग करती हैं। प्रतीकात्मकता उनकी कला का एक ऐसा आयाम है जिससे वह स्त्री को केंद्र में रखकर वर्तमान सभ्यता के वास्तविक चरित्र को समाने लाती हैं। चित्रों में प्रकृति की हरीतिमा के मुकाबले वह महानगरीय संरचनाओं की जटीलता को रचती हैं जो वर्तमान सभ्यता के विरोधाभास को दर्शाता है। विरोधाभासी स्थितियों के बीच स्त्री की उपस्थिति और उसकी संवेदनशील सुंदर छवि भी इस विरोधाभास को सामने लाने में मदद करती है।



आंतरिक सौन्दर्य और भावनाओं को उभारने के लिए एक कलाकार को बाहरी सौन्दर्य का आधार लेना होता है। इसके लिए कलाकार रंगों के साथ ही ऐसे बिम्बों और प्रतीकों का सहारा लेता है जो परिचित होते हैं। मैत्रेयी नंदी के काम में यह दोनों प्रमुखता से दि खाई देते हैं। उनके रंग प्रयोग को देखें तो उसमें हमें एक तरह का उल्लास नजर आता है। शोख रंग अपनी हल्की और गहरी रंगत से दर्शकों में आनंद भाव का संचार करते हैं। रंगों के बीच का संबंध उनके चित्रों में सहअस्तित्व की भावना को सामने लाता है।

मैत्रेयी नंदी समाज में व्याप्त लैंगिक विभेद पर लगातार प्रश्न उठाती हैं और स्त्री के आंतरिक व बाह्य अस्तित्व को उभारती हैं। वह एक तरह से आत्म प्रकाश की स्थिति की मांग करती हैं। निजी और सामाजिक जीवन में स्त्री की भूमिका के महत्व को लक्षित करते हुए वह इस बात पर बल देती हैं कि स्त्री की देह और आत्मा पर स्त्री का स्वतंत्र अधिकार है और उसके इस अधिकार पर अतिक्रमण उन्हें स्वीकार नहीं है। इसीलिए हमें उनकी पेंटिंग्स में स्त्री की ऐसी छवियाँ दिखाई देती हैं जिनमें कहीं वह आहत है तो कहीं अपनी पूरी शक्ति और आत्मविश्वास के साथ इस स्थिति का प्रतिरोध करती दिखाई देती है। अनावृत्त देह उनके यहाँ एक आब्जेक्ट नहीं, एक विचार की तरह सामने आती है, प्रतिरोध की तरह सामने आती है।

मैत्रेयी अपनी पेंटिंग्स में संबद्ध और असंबद्ध दुनिया के बीच एक संतुलन स्थापित करने की कोशिश करती भी दिखाई देती हैं। इनमें कई बार रूपांकन से लेकर रंगों तक में जो समन्वय है वह जीवन के होने को पुरजोर तरीके से सामने लाता है। जीवन के इस होने को एक स्त्री अधिक संवेदनशीलता के साथ महसूस करती है। स्त्रियों ने ही इस संसार को मिटने से बचाने की लड़ाई सबसे ज्यादा लड़ी है, भले ही हमें उसका कोई हिसाब नहीं मिलता। कारण कि हिसाब रखने का काम पुरुष सत्ता के पास ही रहा है। इसीलिए मैत्रेयी अपनी कला में इस बात को विभिन्न प्रतीकों और रंगों के संतुलन के सामने लाती हैं।

आत्मकथ्य

'मैं' की चेतना और हमारे समय में स्त्री की स्थिति, लैंगिक भेद और समाज में दोहरा चरित्र, यही सब मेरी कला का आधार है। मेरी कला आत्म अभिव्यक्ति के साथ ही एक सामाजिक अनुशीलन भी है। चित्र रचना मेरे लिए मेरे होने का आधार तो है ही, साथ ही वह अपने समय को देखने और समझने की दृष्टि भी है। मैं अप. नी कला में स्त्रियों को प्रत्येक स्तर पर समान स्वीकार करने की बात को पूरी ताकत से रखना चाहती हूँ।

मैत्रेयी नंदी

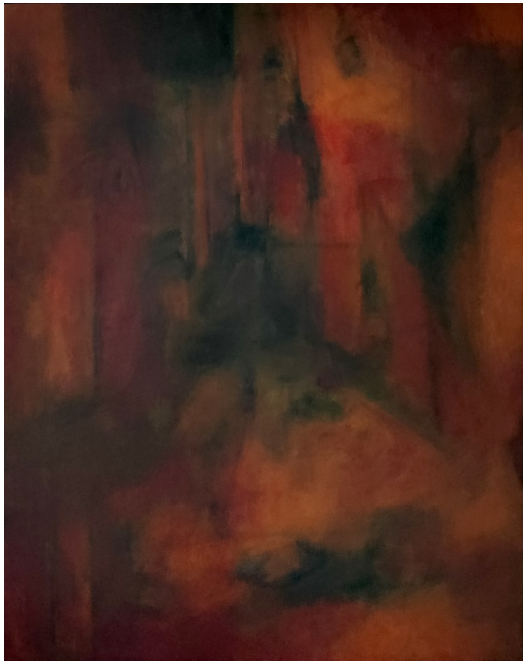
मैत्रेयी नंदी का जन्म 15 दिसंबर 1968 को हुआ। आपने रवींद्र भारती विश्वविद्यालय, कोलकाता से दृश्य कला स्नातक की पढ़ाई की और कॉलेज ऑफ विजुअल आर्ट्स, कोलकाता से पांच साल का एडवांस कोर्स किया। अपनी तीन दशक से अधिक की कला यात्रा में मैत्रेयी नंदी ने अनेक एकल प्रदर्शनियों के साथ ही समूह प्रदर्शनियों में भी भाग लिया है। आपकी कलाकृतियां देश के प्रमुख कला केंद्रों के साथ ही विदेशों में भी प्रदर्शित हो चुकी हैं।

मो. 8882313135 Email: maitreyi.nandy@gmail.com



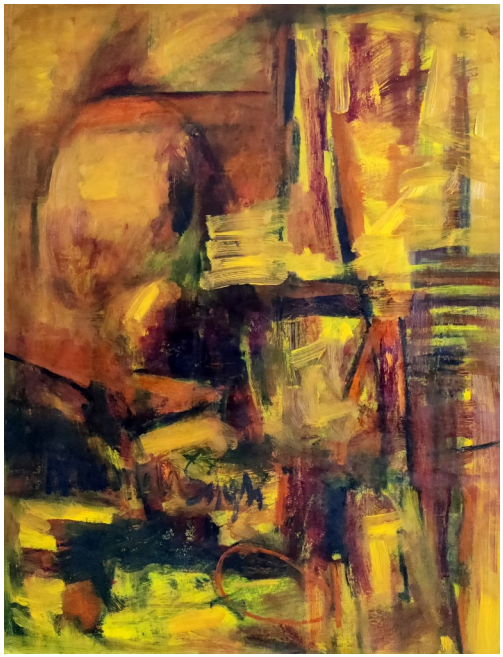
निर्मला सिंह

निर्मला सिंह की कला दो स्तर पर घटित होती दिखाई देती है। एक स्तर वह है जहां उनकी पेंटिंग एक तरह का निरापद समय बुनती हैं, सन्नाटा बुनती हैं जिसमें जीवन की नई संभ. ावनाओं के बीज छिपे होते हैं। इन चित्रों में आकार नहीं हैं, सिर्फ रंग हैं वह भी सीमित, बस उनके विभिन्न वर्ण चित्र को जीवंत करते प्रतीत होते हैं। हल्की–गहरी रंगत के साथ लाल और काला मिलकर गहरा धूसर रंग बन जाता है जिसके बीच से कहीं–कहीं प्रकाश–पुंज जैसा दिखाई देने लगता है, जैसे रेगिस्तान में जलाशय का आभास या अंधकार में दूर कहीं जलते अलाव की रौशनी, कि जीवन अब भी संभव है। किसी कविता की तरह लगती हैं यह पेंटिंग्स। कला में अमूर्तन की जो उच्चावस्था होती है, वह इन चित्रों में दिखाई देती है। पर एक कलाकार के लिए अपनी कला में कोई एक ठहराव तो संभव है ही नहीं। कला तो एक खोज है जो निरंतर चलती रहती है। इस खोज में कलाकार और उसका भाव जगत बदलता रहता है। जैसे निर्मला सिंह के दूसरे चित्र, जिनमें ज्यामितीय आकृ तियाँ हैं, या ऐसी आकृतियां हैं जिन्हें कोई नाम नहीं दिया जा सकता। कहीं–कहीं रंगों की मोटी परतें जैसे एक–दूसरे पर आधिपत्य जमाने को आतुर हैं। यह उनकी कला का दूसरा स्तर है जिसमें बहुत अधिक हलचल दिखाई देती है। इस तरह के चित्र जीवन में भाव और भौतिक स्तर पर व्याप्त बेचैनी को सामने लाते हैं। पहले प्रकार के चित्र जहाँ शांत और खामोश

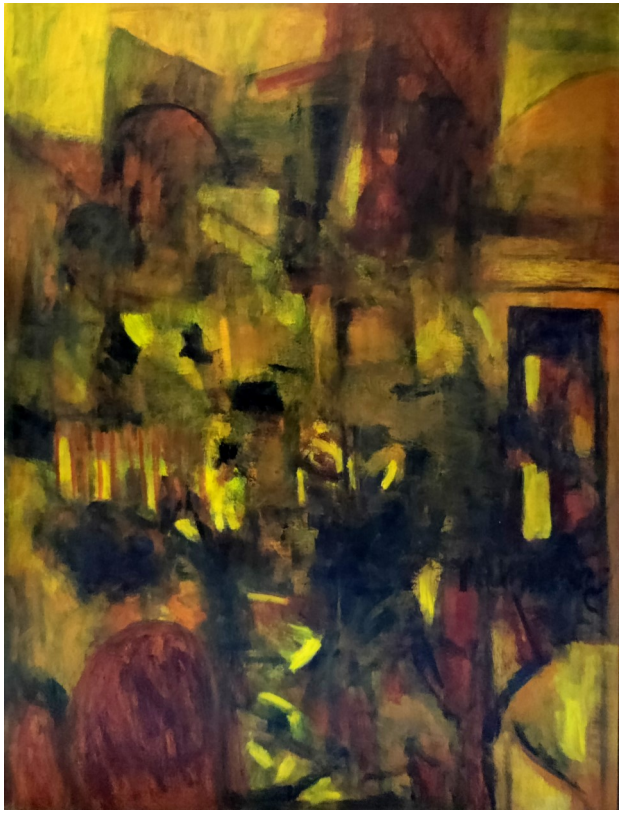




हैं वहीं दूसरी तरह के चित्र अधिक मुखर हैं। क्या यह दोनों स्तर कलाकार के अंतर्द्वंद्व का परिणाम हैं?, या उसने अपने समय की द्वंद्वात्मक स्थिति को इस तरह अपनी कला में प्रकट किया है? कलाकार इसका कोई स्पष्ट जवाब नहीं देती। ऐसा करना उसका अभिष्ठ भी नहीं है। उसके लिए तो बस ऐसा रचना संसार प्रस्तुत करना ही पर्याप्त है जो देखने वालों को अनुभव के एक दूसरे धरातल पर ले जाकर चेतन कर दे। इस तरह उनकी कला में रंगों की भूमिका एक दूसरे रूप में हमारे सामने आती है। कला में रूप की तुलना में अरूप का क्या महत्त्व हो सकता है, इस बात को निर्मला जी की कला बार–बार सामने लाती है। कैनवास पर रंगों की इस अमूर्त बुनावट के बीच किसी–किसी चित्र में हमें किसी गांव या बस्ती की धूमिल–सी छवि झिलमिलाती दिखाई देती है, या किसी मेले में लोगों की भीड़ का आभास होता है। इस तरह के चित्र उनकी कला का तीसरा आयाम कहा जा सकता है जहाँ जीवन के होने और न होने का तनाव साफ दिखाई देता है।

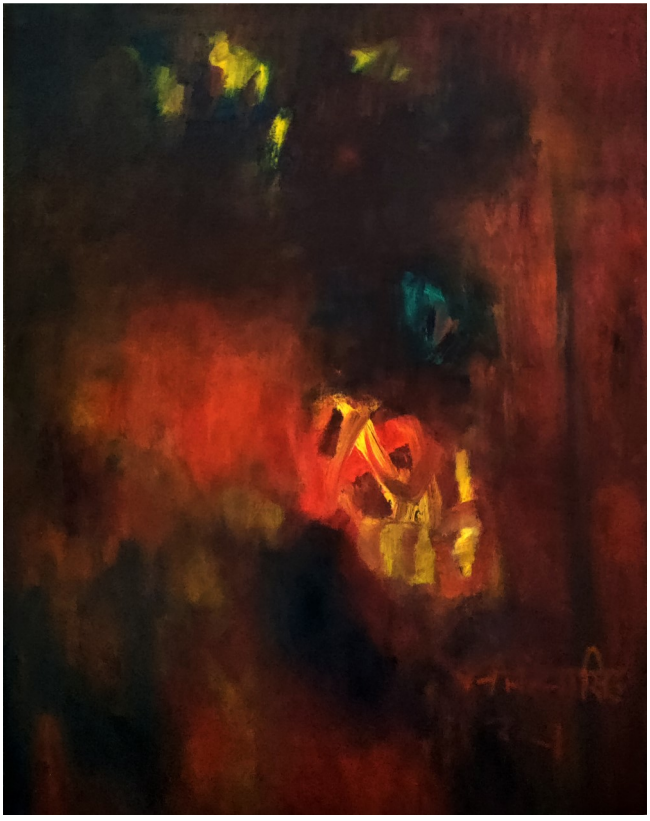


रंग का अपना एक सौन्दर्य तो होता ही है प्रत्येक रंग अपने अंदर कई भाव और विचार समाहित किए होता है। एक रंग जब अपनी अलग अलग रंगत के साथ सामने आता है तो प्रत्येक रंगत अलग भाव और विचार की वाहक हो जाती है। इसी तरह जब

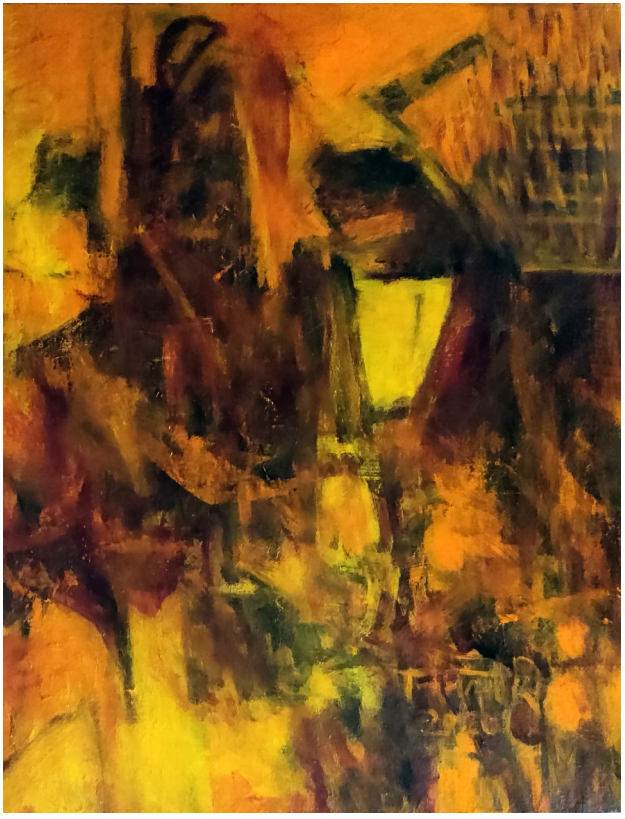


का ध्येय नहीं है। वह अपनी कला में खुद को और देखने वाले को, दोनों को मुक्त करती हैं। इसके लिए वह पहले खुद को रूप से मुक्त करते हुए दर्शकों के सामने ऐसी पेंटिंग प्रस्तुत करती हैं जो उन्हें उनकी वर्तमान स्थिति से मुक्त कर भाव और विचार की एक अलग दुनिया में ले जाती हैं। किसी तरह का विशेष संरचनात्मक या आकल्पन का दबाव उनके यहाँ नहीं है। रचनात्मक उन्मुक्तता उनकी कला को किसी विशेष फ्रेम में नहीं बंधने देती।

दो या दो से अधिक रंग आपस में मिलते हैं तो वह अपने मूल भाव के साथ दूसरे भावों को संचारित करते हैं। निर्मला सिंह की कला रंगों के इन्हीं भावों और विचारों को सामने लाने का काम करती है। निर्मला सिंह के यहाँ जानी–पहचानी छवियाँ कम ही होती हैं। उनकी पेंटिंग को देखते हुए रंगों के संयोजन से कई ऐसे रूप बन जाते हैं जो किन्हीं परिचित रूपों का आभास करा देते हैं। पर रूप में बांधना निर्मला जी



निर्मला जी के अनुसार वह अपनी पेंटिंग्स में खुद को खोजती हैं। यह खुद को खोजना भाव के स्तर पर ही हो पाता है जिसमें रंग मुख्य भूमिका निभाते हैं। कला की शुद्धता और सत्य अंततः व्यक्ति के भाव परिष्कार की स्थिति ही है। भाव ही व्यक्ति का शुद्ध रूप हैं पर भाव के स्तर पर जीवन कभी भी स्थिर नहीं रह पाता। विभिन्न स्थितियों में भाव न केवल परिवर्तित होते रहते हैं अपितु वे कई बार एक–दूसरे पर प्रभाव डालते हैं, और कोई एक भाव एक विशेष स्थिति में अपनी प्रधानता को स्थापित करने का प्रयास करता है। यह सब समय और परिस्थितियों का खेल है। उनकी पेंटिंगों में कई बार दो रंगों का खेल ही दिखाई देता है, जैसे लाल और काला। उसमें भी लाल रंग की प्रधानता दिखाई देती है पर काला उसमें मिलकर अपना रंग जमाने लगता है। लाल उल्लास है और काला निस्तेज, पर यह निस्तेज काला कई जगह पर अपना अलग असर दिखा देता है। इस तरह निर्मला जी अपनी पेंटिंग्स में रंगों के संबंधों से होती हुई मानवीय संबंधों और भावनाओं तक पहुँचती हैं।



निर्मला सिंह पेंटिंग्स में ज्यामितीय संरचनाओं और दूसरी आकल्पन विधियों का भी प्रयोग करती हैं जो पेंटिंग में सौंदर्यबोध को बढ़ाने के साथ ही अर्थ विस्तार को भी संभव करती हैं। अमूर्त चित्रकारों के सामने यह संकट हमेशा होता ही है कि वह अमूर्तन की न्यूनतम स्थिति को प्राप्त नहीं कर पाते हैं। अमूर्तन की न्यूनतम अवस्था का अर्थ है ऐसा चित्र जिसमें किसी भी रूप का कोई संदर्भ दिखाई न दे, जहाँ सिर्फ रंगों का खामोश प्रभाव हो, जहाँ ध्वनि की गूंज के बाद की निस्तब्धता में विचार का अंकुरण हो रहा हो, जहाँ चेतना अपने भौतिक आधार से मुक्त होकर अलग धरातल पर जन्म ले रही हो। इस तरह की स्थिति कम ही कलाकार प्राप्त कर पाते हैं। यह स्वयं में शून्य हो जाने की स्थिति है जो अमूर्तन की अंतिम अवस्था है। निर्मला सिंह अपनी कई पेंटिंग्स में इस अवस्था तक पहुँचती हैं पर फिर अपने भौतिक आधारों की तरफ लौट आती हैं। उनकी मानवीय स्थिति उन्हें ऐसा करने के लिए विवश करती है। वह कहती हैं कि पेंटिंग बनाते हुए मैं खो जाती हूँ, पर साथ

ही मैं पेंटिंग में खुद को तलाश करने लगती हूँ। पेंटिंग में खो जाना यानी शून्य हो जाना है पर जब पेंटिंग में खुद को तलाश करने लगते हैं तो हम अपने भौतिक आधार के साथ संयुक्त हो जाते हैं। निर्मला सिंह की कला में अमूर्तन की चरमावस्था और भौतिक आधारों की तरफ लौटना, दोनों स्थितियाँ अक्सर दिखाई देती हैं। बार–बार भौतिक आधारों, रंग के साथ ही ज्यामितीय या दूसरी संरचनाओं की तरफ लौटना वस्तुतः पुनः यात्रा के लिए आवश्यक है। उनका प्रत्येक कैनवास एक नई यात्रा होता है।



आत्मकथ्य

मेरे मन की गहराई की खोज ही मेरा मुझसे मिलना है। जीवन के अनुभव मुझे कई बार उस मोड़ पर ले आते हैं जहां लगता है कि कुछ भी नहीं है, मेरा होना और जीवन दोनों वहां दिखाई नहीं देते पर मैं उस पल को जीती हूं और फिर अनेक अनुभव मुझे मेरे करीब ले आते हैं। अमूर्तन भी मेरे अंदर भाव में छुपा है जो हर जगह मौजूद है। यह अमूर्तन मुझे जीवन के उस उजाले की तरफ ले जाता है जो प्रत्येक व्यक्ति में भाव के स्तर पर होता है। सांसारिक अनुभव और मेरी अनुभूतियां मिलकर इन चित्रों को रचती हैं। पेंटिंग बनाते हुए मैं खो जाती हूं, पर साथ ही मैं पेंटिंग में खुद को तलाश करने लगती हूं। चित्र की रचना मेरे लिए एक तरह से अंधेरे से उजाले की यात्रा है।

निर्मला सिंह

निर्मला सिंह ने जेजे स्कूल ऑफ आर्ट मुंबई से एमएफए किया है। 2005 से कला प्रदर्शनियों में भागीदारी कर रही निर्मला जी जीवन और सौंदर्य के नवीन आयामों का अमूर्त शैली में रचती हैं। उनके लिए पेंटिंग में रूप से अधिक भाव महत्व रखता है। पांच एकल प्रदर्शनियों के अलावा आप अनेक समूह प्रदर्शनियों में भागीदारी कर चुकी हैं। जेजे स्कूल के मेरिट अवार्ड सहित उन्हें अनेक सम्मान प्राप्त हैं। वर्तमान में आप जयपुर में रहकर कला साधना कर रही हैं।

मो. 9969948112 Email: nirmalasingh6569@gmail.com



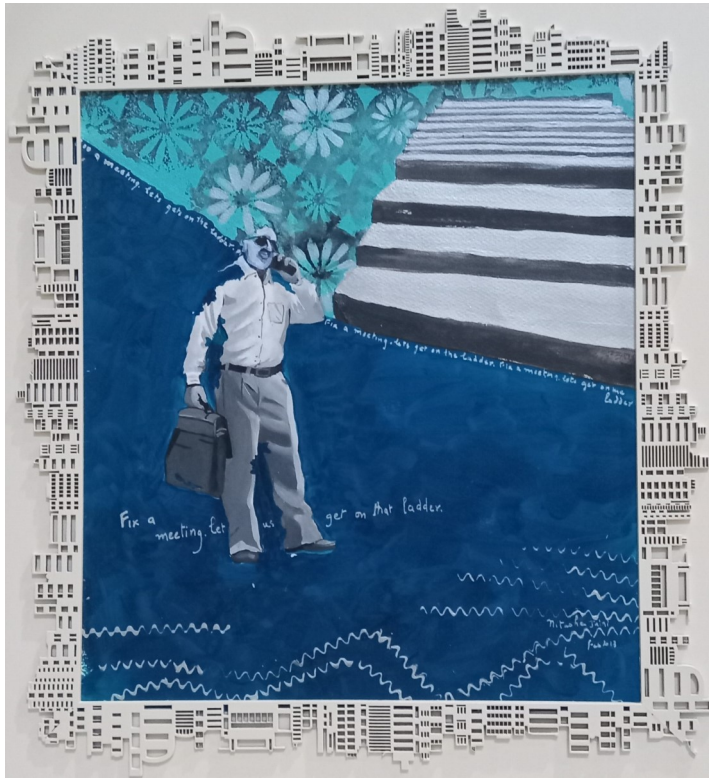


नीताशा जैनी

जो लोग महानगरों में रहते हैं, उनके लिए यह कह देना बहुत आसान है कि भारतीय समाज में पुरुष और स्त्री के बीच का तनाव कम हो रहा है और परिवार से लेकर जीवन के दूसरे क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ रही है। आंकड़े यही बताते हैं, पर यथार्थ कुछ और ही है। आज भी पुरुष वर्ग अपनी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सत्ता में स्त्री की बराबर की भागीदारी के लिए तैयार नहीं है। इससे स्त्री और पुरुष दोनों के स्तर पर अलग तरह का अलगाव और एकाकीपन दिखाई देने लगा है। दोनों के बीच का अघोषित संघर्ष सतह पर भले ही न आ पाता हो परंतु उसके तनाव को महसूस किया जा सकता है। कला की दुनिया में इस तनाव की मुखर अभिव्यक्ति होती रही है। अनेक महिला कलाकारों ने इस विषय पर काम किया है पर नीताशा जैनी अलग रास्ता अपनाती हैं। ज्यादातर महिला कलाकार जहाँ स्त्री के शरीर को केंद्र में रखकर काम करती हैं वहीं नीताशा पुरुष के शरीर को केंद्र में रखती हैं।

नीताशा जैनी की कला पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की शारीरिक स्थिति से अधिक मानसिक स्थिति की घोषणा कही जा सकती है। आमतौर पर कलाकारों ने स्त्री की देह को अपना विषय बनाया है। पुरुष कलाकारों के अलावा महिला कलाकारों ने भी ज्यादादर स्त्री के शरीर को अपना विषय बनाया है, पर नीताशा ने ऐसा नहीं किया। शुरु से ही उनके काम में पुरुष की आकृति केंद्रीय विषय रही है। शुरुआत में जब उन्होंने नग्न पुरुष आकृतियों की रचना की थी तो कला की जगह विषय की चर्चा अधिक हुई। पुरुष कलाकार स्त्री

को नग्न चित्रित करते हैं तो कोई आपत्ति नहीं होती पर जब कोई स्त्री पुरुष को नग्न चित्रित करती है तो पुरुषवादी समाज हिल जाता है। निताशा की कला यात्रा की यह शुरुआत थी। तब से लेकर आज तक वह अपनी कला में महानगर के जीवन और उसमें सामाजिक संरचना में होने वाले बदलावों की बात करती रही हैं। अपने हाल के चित्रों में उन्होंने तकनीक से उपजे एकाकीपन, या कहें बेगानेपन को दर्शाने के लिए मोबाइल में व्यस्त पुरुष को चित्रित किया है। रास्ते में चलते हुए, सीढ़ियाँ





चढ़ते हुए वह किस मंजिल की तरफ बढ़ रहा है, यह चित्र में एक रहस्य है।

चित्र का संयोजन देखकर स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान सभ्यता अपनी ही तकनीक में इसलिए बेसुध है कि उसके लिए अब मंजिल का कोई अर्थ नहीं रह गया है। निताशा इस बात को और अधिक स्पष्ट करने के लिए पेंटिंग की फ्रेम का भी इस्तेमाल करती हैं। आमतौर पर फ्रेम का काम पेंटिंग को एक सीमा में रखना होता है। कई कलाकारों ने फ्रेम को पेंट भी किया है पर निताशा उससे आगे बढ़ जाती हैं। वह फ्रेम का उपयोग पेंटिंग को मुक्त करने के लिए करती


CORPORATE LADDER
CORPORATE LADDER
fix a meeting
fix a meeting



हैं। एमडीएफ बोर्ड को लेजर कटिंग से वह महानगरीय संरचनाओं में बदल देती हैं।

इन महानगरीय संरचनाओं में अकेली पुरुष आकृति मनुष्य के एकाकीपन को अधिक प्रभावशाली तरिके से व्यक्त करती है। यहीं से निताशा की कला अपना विस्तार करती है। इन चित्रों में एक स्तर पर मनुष्य और उसके अपने रचे संसार के बीच टकराव भी दिखाई देता है, और एक दूसरे से बेपरवाही भी, अलगाव भी। उनके बीच प्रतियोगिता है। एक कुर्सी और ब्रीफकेस है, दोनों पॉवर के प्रतीक हैं। पुरुष को यह पॉवर चाहिए, और केवल अपने हाथ में चाहिए। निताशा की कला यहाँ से सवाल शुरु करती है कि इसमें एक स्त्री के लिए कोई स्पेस क्यों नहीं है? सत्ता और शक्ति के नियंत्रण में स्त्री की भागीदारी क्यों नहीं है? उनकी पेंटिंग्स में जो फूलों की उपस्थिति है, मात्र वही स्त्री की उपस्थिति का संकेत है वर्ना वह आज भी अपनी पेंटिंग्स में महिला की



शारीरिक उपस्थिति को दर्ज नहीं करती हैं। वह मानती हैं कि पीढ़ियां बदल गयीं पर स्त्री को लेकर पुरुष की सोच में कोई बदलाव नहीं आया है। निताशा के जीवन पर उनकी नानी और माँ का गहरा प्रभाव रहा है जो स्वतंत्रता सेनानी, सामाजिक कार्यकर्ता और शिक्षाविद् थीं।

निताशा जैनी की कला पेंटिंग, इंस्टालेशन सहित अनेक विधाओं में अभिव्यक्ति की नयी संभावनाओं को तलाश करती रही है। समकालीन जीवन के विभिन्न पक्षों को सामने लाने के लिए वैसे भी आज कला की कोई एक विधा पर्याप्त नहीं है। देश के विभिन्न कला केंद्रों के साथ ही विदेशों में भी उनका काम प्रदर्शित हुआ है। 2020 में उनकी कृतियाँ प्रसिद्ध अमेरिकी कलाकार जूडी शिकागो द्वारा आयोजित ऑनलाइन प्रदर्शनी में शामिल थीं।

आत्मकथ्य

मेरा काम पुरुषों के बारे में बात करता है, और मेरे विचारों की सामग्री जीवन के पुरुष और महिला सिद्धांतों के लिए समानता में निहित है, सबसे मार्मिक पंक्तियों में से एक मनुस्मृति से है जो कहती है – जो पुरुष अपने कल्याण के इच्छुक हैं उन्हें घर की महिलाओं को खुश रखना चाहिए। यह सरल पंक्तियाँ, लेकिन व्यावहारिक जीवन में स्थिति एकदम विपरीत है। मेरे चित्रों में पुरुष सत्ता का चित्रण अधिक है क्योंकि यही हमारे समय का सच है।

निताशा जैनी

निताशा जैनी का जन्म 1963 में पंजाब में हुआ। उन्होंने 1985 में एमए फाइन आर्ट की उपाधि प्राप्त की। निताशा शुरु से ही विद्रोही कलाकार रही हैं। देश व विदेश में अनेक एकल व समूह प्रदर्शनियों में भागीदारी के साथ ही कला कार्यशालाओं में वह अपनी कला प्रदर्शिति करती रही हैं। महानगरीय संरचनाओं के साथ मनुष्य की स्थिति उनका केंद्रीय विषय है।

मो. 9599071713 Email: nitashajaini@yahoo.co.in

पापरी चौधरी



पापरी चौधरी अपने परिवेश की निर्जीव वस्तुओं और स्थिर जीवन में गतिशीलता के संकेतों को रचती हैं। उनके चित्रों में अक्सर हम पाते हैं कि वह किसी घर के अंदर के एक हिस्से का दृश्य है जिसमें तमाम चीजें रखी हुई हैं। कमरा सुख–सुविधाओं से भरा हुआ है पर इस दृश्य से मनुष्य अनुपस्थित है। एक तरह से जीवन के खालीपन की यह प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति जान पड़ती है, पर ऐसा है नहीं। पापरी चौधरी की पेंटिंग्स को ध्यान से देखें और प्रस्तुत दृश्य में उपस्थित जड़ जीवन का विश्लेषण करें तो हम पाएंगे कि वहाँ मनुष्य की उपस्थिति के अनेक संकेत हैं। कमरे में टेबल पर रखी चाय की केतली और कप इस बात का संकेत करते हैं कि यहाँ कोई था जो अभी–अभी चला गया है। चित्र में जो सूनापन दिख रहा है, वास्तव में वह थोड़ी देर पहले के कोलाहल के बाद की शांति भी कही जा





सकती है। फिर चित्र में नजर आ रही चीजों, कटलरी, फर्निचर, पर्दे आदि, की दृष्टि से देखें तो उनका अपना एक जीवन है। यह जीवन उनकी उपयोगिता से जुड़ा है जो अभी–अभी घटित हुई है। इसलिए यह मान लेना कि पापरी जी एकांत या अकेलेपन की रचनाकार हैं, उनके साथ अन्याय होगा। वैसे जितने भी साधक होते हैं, सबको एकांत पसंद होता है क्योंकि उसी एकांत में वह जड़ और चेतन जगत के साथ संबंध स्थापित करते हुए उसे सार रूप में समझ पाते हैं।

पापरी चौधरी का मानना है कि हम अपने आसपास के वातावरण से अलग नहीं हो सकते। हमारा परिवेश ही हमारी कला को, और अंततः हमारे जीवन को एक रूप और दिशा देता है। उनका मानना है कि हमारा अस्तित्व हमारे रहने की जगह की सीमाओं में समाहित है। हमारी हर क्रिया, हर विचार हमारे पैरों के नीचे की

जमीन से जुड़ा है। हम जिस चारदीवारी में रहते हैं उसी में हम अपनी भावनाओं और विचारों को व्यक्त करते हैं क्योंकि वहीं हमारा सच्चा अस्तित्व होता है। यह जगह हमारा घर हो सकता है या कार्यस्थल। एक कलाकार के रूप में वह स्वीकार करती हैं कि जीवन में उपस्थित वस्तुएँ कला को प्रभावित करती हैं। इसीलिए उनकी पेंटिंग्स में हमें वस्तुओं की एक अलग दुनिया दिखाई देती है। वस्तुओं की इस दुनिया का अपना अर्थपूर्ण सार है। यह जो सार यानी मूल है, वह जड़ और चेतन, दोनों के बीच एक अलग संबंध को दर्शाता है।





वस्तुओं का अस्तित्व मनुष्य से है। मनुष्य के लिए ही उनका निर्माण हुआ है, इसलिए वह उस स्थिति में भी मनुष्य से जुड़ी होती हैं जब वह मनुष्यहीन वातावरण में होती हैं। कोई वस्तु दुकान में है तो उसका संबंध उसे बनाने वाले और बेचने वाले से अलग करके नहीं देखा जा सकता। इसी प्रकार जब वह किसी घर या कार्यालय में होती हैं तो उन्हें उन मनुष्यों से अलग करके नहीं देखा जा सकता जो उनका उपयोग करते हैं। भारतीय समाज में तो वैसे भी अपनी वस्तुओं से लोगों का अलग तरह का जुड़ाव

होता है। लोग पुरानी अनुपयोगी हो चुकी अनेक वस्तुओं को बदल देते हैं पर कई बार वह उन्हें कबाड़ में देने की बजाय संभाल कर भी रखते हैं। ऐसी कई वस्तुओं के साथ उनकी स्मृतियाँ जुड़ी होती हैं। इसीलिए जब हम पापरी चौधरी के चित्रों में घरों के अंदरुनी दृश्यों में केवल फर्निचर व अन्य वस्तुओं को देखते हैं तो वह अपने एकांत में भी मनुष्य के साथ अपने संबंध, और अप्रत्यक्ष रूप में उसकी उपस्थिति का परिचय देती हैं। एक स्त्री का तो अपने घर और उसकी वस्तुओं के साथ अलग भावनात्मक संबंध होता है, जिसे पुरुष शायद महसूस न कर सकें। इसीलिए पापरी जी मानती हैं कि घर की चारदीवारी के अंदर का वस्तुओं का जो संसार है, उसमें हम अपनी भावनाओं और विचारों को व्यक्त करते हैं।



आत्मकथ्य

हमारा अस्तित्व हमारे रहने की जगह की सीमाओं में समाहित है। हर क्रिया, हर विचार, हमारे पैरों के नीचे की जमीन से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। यह इन चार दीवारों के भीतर है जहाँ हम अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हैं, जहाँ हमारा सच्चा अस्तित्व बसता है। हमारे जीवन में मौजूद वस्तुएँ हम पर प्रभाव डालती हैं। मैं अपनी कला में घर के अंदर के वातावरण और वस्तुओं के माध्यम से मानवीय उपस्थिति को दर्ज करती हूँ।

पापरी चौधरी

पापरी चौधरी का जन्म पश्चिम बंगाल में हुआ। शांति निकेतन से उन्होंने 2004 में कला में मास्टर्स की डिग्री प्राप्त की। पापरी के लिए कला करना सांस लेने की तरह है। वह अपने परिवेश के स्थिर जीवन के चित्रण के माध्यम से मानवीय उपस्थिति को एक नया अर्थ देती हैं। देश और विदेश में आपकी अनेक एकल व समूह प्रदर्शनियां हो चुकी हैं।

मो. 91 9163260975

Email : paprigart@gmail.com

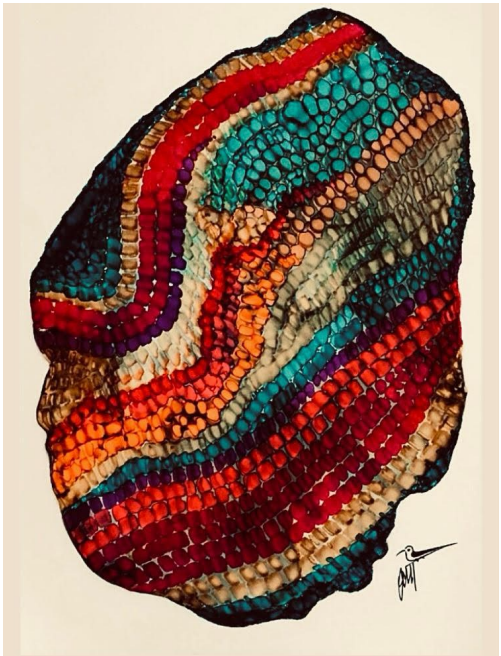
डॉ. पुष्पा दुल्लर



प्रकृति से बड़ा कोई रचनाकार नहीं है। उसके रचना संसार को पूरी तरह समझ पाना शायद ही कभी संभव हो पाएगा। उसके रचना संसार में सब कुछ मूर्त है क्योंकि सबकुछ साक्षात है। फूलों, पत्तों से लेकर लकड़ी, पहाड़, पत्थर जैसे साक्षात तत्वों में भी हमें उनके बाह्य रूप में ही इतनी तरह की संरचनाएँ मिलती हैं कि सबको देखना–समझना आसान नहीं है। उनके आंतरिक स्वरूप में इतनी कलात्मकता है कि शायद ही कभी उसे पूरी तरह उजागर किया जा सके। एक कलाकार इस काम को अपने स्तर पर करने की कोशिश अवश्य कर सकता है। वरिष्ठ कलाकार



डॉ. पुष्पा दुल्लर चार दशक की अपनी कला यात्रा में प्रकृति के विभिन्न अवयवों के बाह्य एवं आंतरिक सौंदर्य को अपनी कला में उजागर करने का प्रयास कर रही हैं। लोक एवं आदिवासी कलाओं की समृद्ध परंपरा और आधुनिक कला–चेतना उनके कलाकर्म को एक नया आयाम देते हैं।



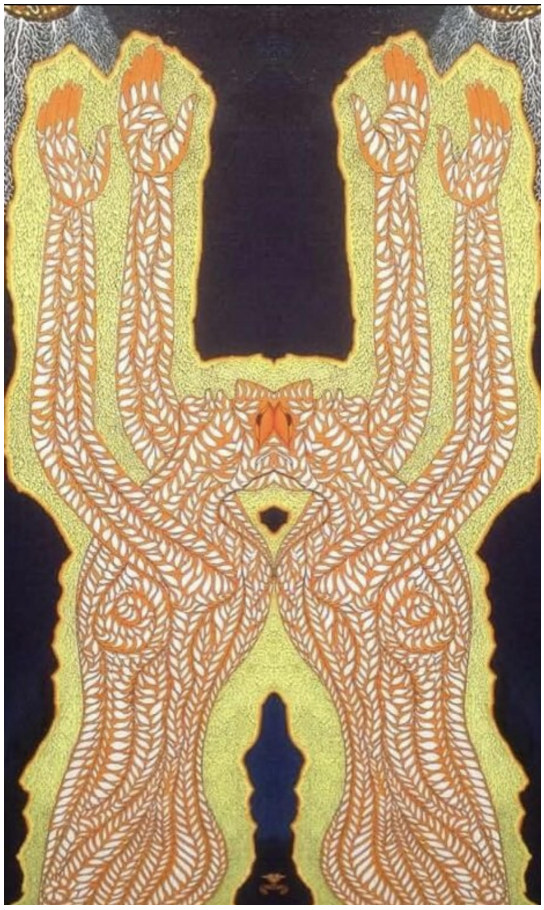
अमूर्तन की तरफ उनका स्वाभाविक रुझान है जो प्रकृति को देखने और समझने की प्रक्रिया का प्रभाव कहा जा सकता है। अपनी कला यात्रा में उन्होंने आकृतिमूलक काम भी किये हैं पर आकृतियों की एक सीमा है। एक कलाकार जब आकृतियों की सीमा से स्वयं को मुक्त कर लेता है तो उसके लिए अपनी कला में अपने अनुभवों और संवेदनाओं को अधिक प्रभावी रूप में व्यक्त करना संभव हो जाता है।

राजस्थान में कला शिक्षा लेने और देने, दोनों में उनकी संलिप्तता ने उनकी कला को गहरे से प्रभावित किया है। राजस्थान की संस्कृति का रंग उनके चित्रों में रंगों की छटा के रूप में सामने आता है। वह प्रकृति की उज्ज्वल छवियों को रचते हुए उसके विविधवर्णी सौंदर्य को केंद्र में रखती हैं। वह अक्सर चटख रंगों का प्रयोग करती हैं जो जीवन में उल्लास का भाव जगाते हैं।

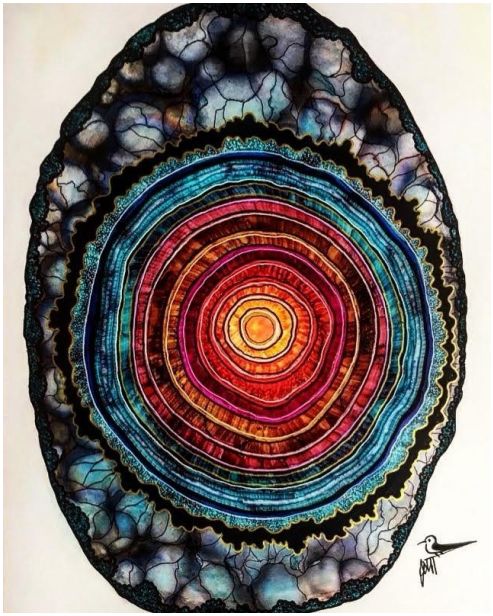
वैसे राजस्थान का एक और रंग है जो धूसर है। यह रंग है रेगिस्तान का, पर इस रंग में भी कला समाहित है। हवा और पानी के प्रभाव से रेगिस्तान में बनने वाली आकृतियाँ किसी कलाकृति से कम नहीं होती हैं। यहाँ तक कि रेत में धूप और छाँव के साथ वर्ण–भेद की प्रतीति होती है। यह वर्ण–भेद वास्तविक नहीं होता है पर उसका आभास एक नए तरह का सौंदर्यबोध जगाता है। इस सौंदर्यबोध को रास्थान के कई कलाकारों ने आधुनिक कला में सिरजा



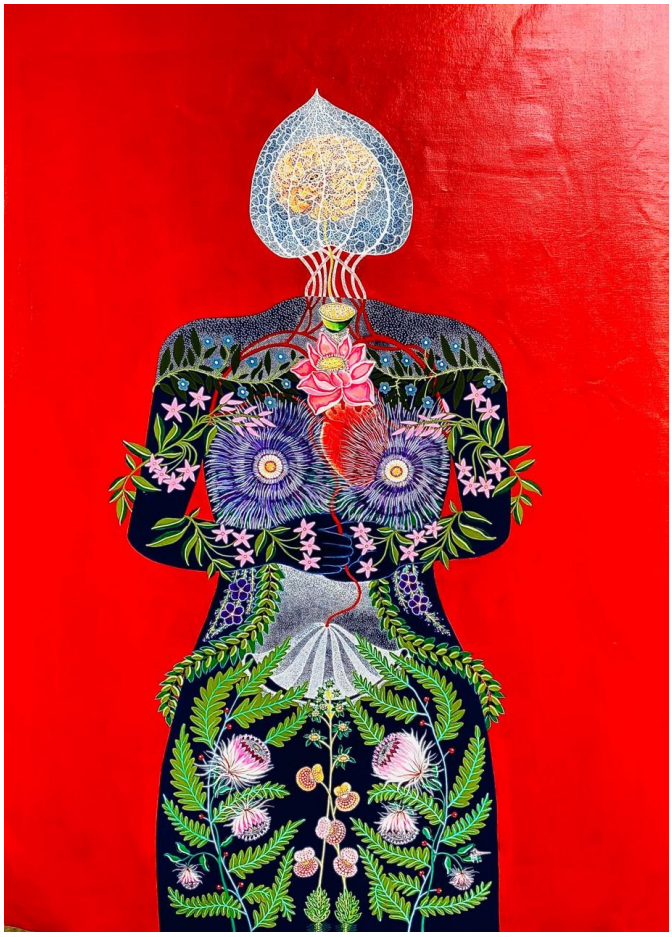
है। राजस्थान की लोक कलाओं के कुछ संरचनात्मक तत्व बिंदी व रेखाएँ, पुष्पा जी के काम में आते हैं। यह दोनों संरचनात्मक तत्व भारतीय आदिवासी कला में भी भिन्न रूप से पाए जाते हैं और आस्ट्रेलिया के आदिवासियों की कला में भी। पुष्पा जी कई साल से आस्ट्रेलिया में भी रहती रही हैं जहाँ उन्होंने वहाँ के मूल आदिवासियों और उनकी कला को नजदीक से देखा है। भारतीय और आस्ट्रेलियाई आदिवासी कलाओं ने उनकी कला पर कई तरह से प्रभाव डाला है।



अमूर्त कलाकार अक्सर प्राकृतिक रूपों और संरचनाओं से प्रेरणा लेते हैं, लेकिन उन्हें एक नए संदर्भ और आयाम में प्रस्तुत करते हैं। प्रकृति में कई अद्‌भुत रूप हैं, जैसे पेड़ के तने की आंतरिक संरचना, पत्तियों की नसें, या पत्थरों की परतें, जो अपनी प्राकृतिक अवस्था में भी एक तरह की कला होते हैं। यह सब प्राकृतिक रूपांकन होते हुए भी अमूर्त कलाकारों के लिए बहुत मायने रखते हैं। अनेक कलाकार प्रकृति को उसके बाह्य सौंदर्य के साथ यथार्थवादी रूप में रचना पसंद करते हैं पर पुष्पा जी इन प्राकृतिक रूपों को पहले जानने का काम करती हैं, फिर उनका अध्ययन करती हैं, और उसके बाद उन्हें अपनी कला में नए और अद्वितीय रूप में ढालती हैं।



अमूर्त कला की सुंदरता यह है कि यह केवल बाहरी रूपों तक



सीमित नहीं रहती, बल्कि वह उन रूपों की आत्मा, उनकी आंतरिक संरचना, और उनके पीछे की भावना को पकड़ने का प्रयास करती है। यह कला प्रकृति के तत्वों को अपने भीतर समाहित कर, उन्हें एक नए नजरिए से प्रस्तुत करती है। इस प्रक्रिया में, कलाकार अपने व्यक्तिगत अनुभवों और संवेदनाओं को भी इन रूपों में जोड़ता है, जिससे रचना और भी गहन और अर्थपूर्ण बन जाती है। यह कला दर्शकों के लिए भी एक अनूठा अनुभव बन जाती है।

कला की एक प्रक्रिया है, पहले देखना, फिर उसे अनुभव करना और उस अनुभव से उपजी संवेदना व भावों को ऐसा कलारूप देना जो सामान्य होते हुए भी एक विशेष अर्थ की तरफ ध्यान आकर्षित करे। यह विशेष अर्थ कलाकार का हो सकता है पर अंतिम नहीं होता। वह दर्शक की अपनी चेतना और स्थिति पर भी निर्भर होता है। इसीलिए किसी एक ही पेंटिंग को देखते हुए दर्शकों में अलग–अलग अनुभवों का संचार होता है और वह उसके अलग–अलग अर्थ तक पहुंचते हैं। पुष्पा जी की कला के साथ भी यही अनुभव होता है।

पुष्पा जी के चित्र–संसार को देखें तो उसमें एक विशेष प्रकार के चित्र सहज ही ध्यान आकर्षित करते हैं। उन चित्रों में अव्यवस्थित गोलाकार आकृतियाँ हैं जो कभी पेड़ों के कटे हुए तने का आभास देती हैं तो कभी कुंडली मारे बैठे सर्प का। वैसे इस तरह की संरचनाएँ जीव विज्ञान से लेकर दूसरे कई क्षेत्रों तक में मिलती हैं, पर पुष्पा जी के अनुसार उन्होंने इसे सर्प की आकृति को ध्यान में रखते हुए रचा है। सर्प और सर्पाकार आकृति का भारतीय लोक व आदिवासी कलाओं के साथ ही लघुचित्र कला में भी कई तरह से प्रयोग हुआ है। एक आश्चर्यजनक तथ्य यह भी है कि भारत की ही तरह आस्ट्रेलिया के आदिवासी समाजों में भी सर्प को

देवता मानते हुए उसकी अनेक प्रकार की छवियों को रचने की परंपरा है। इस परंपरा ने वहाँ के आदिवासी समाजों की कला को एक अलग पहचान दी है। पुष्पा जी ने ऑस्ट्रेलिया आवास के दौरान वहाँ के आदिवासियों की कला को निकट से देखा–समझा और उसे प्रेरणा लेकर अपनी तरह से चित्रों की रचना की। सर्प के आकार, विशेषरुप से उसके कुंडली रूप को लेकर उन्होंने अनेक चित्र रचे हैं पर ऐसा करते हुए वह उसमें संरचना और आकल्पन के स्तर पर इतनी विविधता रखी है कि उनमें सर्प की अपेक्षा कई दूसरी संरचनाओं का आभास होता है। यही उनकी कला की खूबसूरती है जो किसी एक रूप में बंधती नहीं है। यहीं से उनकी कला अमूर्तन की उस अवस्था में प्रवेश करती है जहां रूप और अरूप में कोई भेद नहीं रह जाता है। मूर्त और अमूर्त के इस अभेद की अवस्था हमें संगीत, अध्यात्म और कई दूसरे क्षेत्रों तक ले जाती है।

आत्मकथ्य

मेरा मानना है कि इच्छा मानव स्वभाव का एक मूलभूत पहलू है, और यह सभी के लिए एक सामान्य आधार बनाती है। इस अर्थ में, इच्छा को हमारे कई कार्यों, प्रेरणाओं और यहाँ तक कि हमारे उद्देश्य की भावना के पीछे एक प्रेरक शक्ति के रूप में देखा जा सकता है। यह कुछ ऐसा है जो सभी लोग साझा करते हैं, चाहे उनके विशिष्ट लक्ष्य या परिस्थितियाँ कुछ भी हों। मैं अपने हृदय के प्रतिबिंबों को चित्रित करती हूँ, मैं अपने सपनों को भी सहजता से गढ़ती हूँ। मेरी कला मेरे अस्तित्व की भाषा है, और शायद इसी वजह से मेरी आत्मा स्वतंत्र और उत्साही है। प्रकृति ही मुझे आधार देती है। प्रकृति की बारीकियों को उसके विभिन्न छंदों और अनुच्छेदों को मधुर रंगों में कैद करने का जुनून मुझे सदैव प्रोत्साहित करता है। इच्छा, जिज्ञासा और वास्तविकताओं के बीच की बुनाई मेरे सरोकार हैं। **डॉ पुष्पा दुल्लर**

डॉ. पुष्पा दुल्लर की कला शिक्षा राजस्थान के वनस्थली विद्यापीठ में हुई। बाद में उन्होंने वहीं विभिन्न पदों पर 30 वर्ष से अधिक कला शिक्षक की भूमिका भी निभाई। आधुनिक कला के साथ ही लघुचित्र कला का भी आपने विशेष अध्ययन किया है। जयपुर व मुंबई सहित अनेक स्थानों पर आपकी एकल प्रदर्शनियां हो चुकी हैं। इसके अलावा भारत और भारत से बाहर पोलेंड, मैक्सिको आदि में आप समूह प्रदर्शनियों में अपनी कला प्रदर्शित कर चुकी हैं। देश–विदेश में अनेक कला शिविरों में भी आपकी भागीदारी रही है। आस्ट्रेलिया निवास के दौरान आपने वहां के मूल आदिवासियों की कला का विशेषरूप से अध्ययन किया है। आप वर्तमान में जयपुर रहकर कला साधना कर रही हैं।

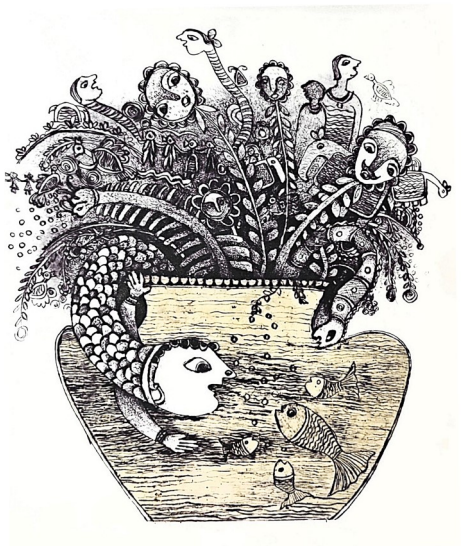
मो. 99508 78100 Email: pushpa_dullar@yahoo.com

राखी कुमारी

राखी कुमारी एक प्रिंटमेकर और चित्रकार हैं, जो समकालीन कला प्रथाओं के भीतर पारंपरिक मिथिला पेंटिंग की खोज के लिए जानी जाती हैं। उनका काम अक्सर आज के समाज में महिलाओं की स्थितियों को दर्शाने पर केंद्रित होता है, जो उनकी इच्छाओं और निराशाओं दोनों को उजागर करता है। वह महिलाओं के जीवन की जटिलताओं को कुशलता से चित्रित करते हुए, संघर्ष के विषयों को जीवन के आनंद के साथ संतुलित करती हैं।



राखी कुमारी की कला लोक कला और आधुनिक कला का सुंदर संयोजन है। मिथिला पेंटिंग या मधुबनी कला भारत और नेपाल के मिथिला क्षेत्र की कला है जो सदियों से वहाँ की स्त्रियों द्वारा रची जाती रही है। इसमें धार्मिक और आख्यानिक चित्रण के साथ ही सामाजिक संस्कारों के चित्रण की प्रथा रही है। राखी कुमारी इस प्रथा को समकालीन मुहावरा देती हैं। मिथिला या मधुबनी में चित्र रचना में चटख रंगों का अधिक प्रयोग किया जाता है पर राखी की रंग योजना



Title- Freedom
Medium- Drypoint And Chine-Colle
Size-53x53cm



छापा कला की तरह एक रंगी होती है। छापा कला की तरह एक रंगी योजना के साथ वह टैक्सचर के माध्यम से अपने विषय को अधिक प्रभावी बनाती हैं। वैसे वह पेंटिंग और छापाकला, दोनों में लगातार काम कर रही हैं। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि उनकी पेंटिंग में छापाकला की विशेषताएं अनायास चली आती हैं।

राखी कुमारी का काम महिलाओं की स्थितियों पर जोर देता है। हम जानते हैं कि भारतीय समाज में आज भी स्त्री को लेकर सामंतवादी मानसिकता कायम है। महानगरों में भले ही दिखावे के लिए बदलाव आया हो, भले



ही सिनेमा और दूसरे मनोरंजन के माध्यमों में स्त्री स्वतंत्रता और समानता की बात कर लें, पर यथार्थ सब जानते हैं। राखी कुमारी की कला इसीलिए ऐसी स्त्रियों की सामाजिक अपेक्षाओं, चुनौतियों और सशक्तिकरण को संबोधित है जो अपने अधिकार के लेकर संघर्ष कर रही हैं। राखी कुमारी ने अपनी रचनाओं में मानवीय इच्छाओं और निराशाओं को चित्रित किया, व्यक्तिगत आकांक्षाओं और महिलाओं के सामने आने वाली बाधाओं को दर्शाया है। इसके साथ ही वह जीवन के आनंद को भी व्यक्त करती हैं, खुशी, लचीलापन और सांस्कृतिक समृद्धि के क्षणों का जश्न मनाती हैं। अपनी कला के माध्यम से राखी कुमारी न केवल मिथिला चित्रकला के

पारंपरिक सौंदर्यशास्त्र को संरक्षित करती हैं, बल्कि समकालीन मुद्दों को प्रतिबिंबित करने के लिए इसमें आधुनिक संवेदनाओं का समावेश भी करती हैं, जिससे उनका काम सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण और सामाजिक रूप से प्रासंगिक बन जाता है। राखी कुमारी की कला का एक आयाम छापा कला है। वह कई बार वुड़कट प्रिंट पर एचिंग भी करती हैं। इस तरह वह एक ही चित्र में दो भिन्न प्रभावों को उजागर करते हुए प्रिंट में एक नया सौन्दर्यबोध जागृत कर देती हैं। जब वह पेंटिंग करती हैं तो उसमें प्रिंट का प्रभाव लाने के लिए कई हल्की परतों का प्रयोग करती हैं। पेंटिंग में वह अक्सर अधिक और चटख रंगों का प्रयोग नहीं करती हैं। इससे पेंटिंग में प्रिंट वाली सुंदरता लाना आसान हो जाता है। इतना ही नहीं, वह पेंटिंग में रंगों की कोमलता को अधिक महत्व देती हैं।



राखी के विषयों को देखें तो उनमें ज्यादातर मानवीय संबंधों की प्रमुखता है। स्त्री और पुरुष के बीच के संबंध को उनकी कला में कई तरह से पढ़ा जा सकता है। पुरुष के सत्तावादी चरित्र को उजागर करने के लिए वह उसे शेर





के रूप में रचती हैं। स्त्री और पुरुष के बीच तालमेल को दिखाने के लिए वह दोनों को एकीकृत करके भी रचती हैं। विमान जैसी संरचना उनके यहाँ अक्सर मिलती है जिसमें वह अनेक मानव आकृतियों को समाहित कर सामाजिकता का बोध कराती हैं। शेर, पक्षी, मछली आदि मिथिला पेंटिंग में मिलते हैं। राखी ने उन्हें वहां से लेते हुए नए रूप और संदर्भ के साथ रचने का काम किया है।

राखी की कुछ पेंटिंग्स में स्त्री और पुरुष को संयुक्त दिखाया है जो दोनों के बीच के संबंध की अनिवार्यता को दर्शाता है। इस तरह का संयोजन लोक कलाओं में मिलता है पर यहाँ कुछ खास है जिसपर गौर किया जाना चाहिए। ऐसे ही एक चित्र में स्त्री और पुरुष दोनों विपरीत छोर पर हैं पर एक–दूसरे को देख भी रहे हैं। दोनों के हाथ में मोबाइल है। इसका अर्थ है दोनों में संवाद भी है। मोबाइल ने लोगों के बीच संचार को आसान किया है पर उसने लोगों को दूर भी कर दिया है। इस पेंटिंग में यही दिखाया गया है। इसके साथ ही इसमें एक बात और इंगित की गई है, और वह यह कि पुरुष के कई चेहरे यानी व्यक्तित्व होते हैं। चित्र में पुरुष के तीन चेहरे इस बात की तरफ इशारा करते हैं। इसके साथ ही इस तरह का संयोजन इस बात का भी इशारा करता है कि हमने अपने आसपास जो आभासी दुनिया खड़ी कर ली है, उसमें यथार्थ और कल्पना के संबंध को इस कदर उलझा दिया है कि उन्हें पहचान पाना मुश्किल हो गया है।

आत्मकथ्य

एक कलाकार के रूप में मैं समकालीन कला करते हुए उसमें अपनी पारंपरिक लोक कलाओं के लिए नई संभावनाएँ तलाशने पर यकीन करती हूँ। इसीलिए मैं मिथिला लोकचित्र कला की शैली को अपनाते हुए समकालीन जीवन को व्यक्त करती हूँ। मैं प्रत्येक चित्र को एक कहानी की तरह चित्रित करती हूँ। मेरे चित्रों में स्त्री और पुरुष के सहअस्तित्व की भावना के साथ ही दूसरे सामयिक मुद्दों की भी अभिव्यक्ति है।

डॉ. राखी कुमारी

डॉ. राखी कुमारी का जन्म 1971 में हुआ। पटना और खैरागढ़ से आपने कला की विधिवत शिक्षा प्राप्त की। मिथिला की वित्तीचित्रण परंपरा पर आपकी पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है। आप ग्राफिक्स और पेंटिंग दोनों विधाओं में काम करती हैं। कला करने के साथ ही कला पर वक्तव्य भी देती हैं। वर्तमान में पटना में रहते हुए आप कला साधना कर रही हैं।

मो. 9234889914 Email: rakheegraphiccac@gmail.com

डॉ. संजीदा खानम

डॉ. संजीदा खानम की कला गहन अनुभूतियों की अभिव्यक्ति है जो रंगों और सतह की बुनावटों के माध्यम से अमूर्तता का एक आल्हादकारी रूप प्रस्तुत करती है। उनके चित्रों में चमकदार रंगों की उपस्थिति में टैक्सचर के साथ ही पारदर्शी परतें जीवन के आनंद का सृजन करती हैं। इस आनंद को किसी एक स्थिति या अर्थ तक सीमित नहीं





रखा जा सकता। यह जीवन की व्यापकता को व्यक्त करता है। जीवन को हम एक सीमा में ही जानते हैं पर वह होता असीम है। एक कलाकार ही जीवन की असीमता का अनुभव कर पाता है। संजीदा इसी असीमता के आनंद को कैनवास पर रचती हैं। इस रचाव में रौशनी और बादलों की तरह झिलमिलाते रंग जीवन के उत्सव को व्यक्त करते हैं। रंग जो किसी एक अर्थ या भाव से बंधे नहीं हैं, संजीदा की पेंटिंग्स में खुले समुद्र की तरह आते हैं जहाँ जीवन की आकांक्षाएँ और उल्लास हिल्लोरे ले रहे हैं। कैनवास जो बंधा है, जिसमें रूप की कोई परिभाषित उपस्थिति नहीं है, वहाँ जीवन होने की



संभावना लगातार उल्लसित दिखाई देती है।

जीवन को देखने का एक स्त्री का नजरिया थोड़ा भिन्न होता है, और जब वह कलाकार हो तो उसके लिए





कैनवास एक दूसरा जीवन बन जाता है। इस दूसरे जीवन में भी वह पहले जीवन को खोजने लगती है। इस खोज में उसके अंदर का कलाकार कैनवास के सीमित स्पेस में वह सब देखती–पाती है जो पहले जीवन में वांछित रहा है। संजीदा का जीवन और कला को देखने का नजरिया अलग है। एक स्त्री के रूप में उनके हृदय की कोमल भावनाएँ और मृदुलता उनके व्यवहार और कला में स्पष्ट झलकती हैं। यह संवेदनाएँ और अनुभूतियाँ एक कलाकार के रूप में उन्हें सशक्त बनाती हैं। उन्होंने अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए अमूर्तन का मार्ग चुना जो शायद उनके लिए आकृतिमूलक पेंटिंग के मुकाबले अधिक स्वाभाविक है क्योंकि इससे उनके लिए कहने और न कहने के विभाजन को मिटाना आसान हो गया है।



अमूर्त चित्रों की रचना में संजीदा ने संरचनात्मक तत्वों के बजाय भावनात्मक पहलुओं को प्राथमिकता दी है। उनकी कला में सौन्दर्य एक प्रमुख तत्व है जिसके माध्यम से वे जीवन के सुंदरतम पक्षों को प्रतिकात्मक रूप में उभारती हैं। प्रतिकात्मक इसलिए कि उनके यहाँ किसी तरह के जाने–पहचाने रूप नहीं हैं, यहाँ तक कि ज्यामितीय आकार भी लगभग अनुपस्थित ही हैं। इसलिए अपनी पेंटिंग में वह रंगों और टैक्सचर के माध्यम से प्रतिकात्मक रूप में ही अपनी बात कहती हैं। सौंदर्य उनकी कला का एक प्रमुख गुण है। सौंदर्य किसी भी रूप में हो, वह जीवन की संभावनाओं को प्रकट करता है। पर उनकी कला सिर्फ सौंदर्य का गान नहीं है बल्कि उसमें सामाजिक संरचना के सहअस्तित्व जैसे महत्वपूर्ण पहलुओं को भी व्यक्त करती है। इसके लिए वह रंगों को इस तरह मिलाती हैं जैसे वह एक–दूसरे को सहारा देते खड़े हैं।

संजीदा खानम एक प्रतिभाशाली वरिष्ठ चित्रकार हैं जो रंगों और अपरिभाषित आकृतियों और बुनावटों के माध्यम से अमूर्तता की खोज करती हैं। कैनवास को विभाजित करते हुए वह कला में अपना अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत करती हैं जो एक साथ कई कहानियों की उपस्थिति को बोध कराता है। दो अलग रंगों के साथ कैनवास को विभाजित करना कहीं न कहीं जीवन के दो रूपों की अभिव्यक्ति भी है। इन दो रूपों में एक व्यक्ति की आंतरिक दुनिया होती है जो उसकी अपनी इच्छाओं से बनी होती है और दूसरी बाहरी दुनिया जो कई तरह की सामाजिक व्यवस्थाओं से संचालित होती है। एक स्त्री के लिए इन दोनों दुनियाओं में संतुलन बनाना आसान नहीं होता। अक्सर इन दोनों के बीच टकराव की स्थिति भी बन जाती है। इसके बाद भी एक स्त्री इनके बीच किसी प्रकार संतुलन बनाए रखती है, कुछ त्याग कर तो कुछ अपना कर। संजीदा की पेंटिंग्स में

इसे देखा जा सकता है। उनकी पेंटिंग्स में विपरीत स्थितियों के बीच संतुलन साधने की आकांक्षा को साफ महसूस किया जा सकता है।



संजीदा के कामों में जीवन के निर्माण की प्रक्रिया स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उनके कैनवास पर रंगों का सम्मिलन और प्रवाह यह दर्शाता है कि जीवन जीने का सबसे महत्वपूर्ण आयाम, जीवन का रचनात्मक सृजन है। उनकी कला हमें जीवन की जटिलताओं और उसकी सुंदरता के प्रति जागरूक करती है, जो सहअस्तित्व और सामंजस्य का संदेश देती है।

आत्मकथ्य

मैं अपने अनुभवों और भावनाओं के सार तत्व को पेंट करना पंसद करती हूँ। मुझे मानवीय या दूसरे आकारों की जगह अमूर्त संरचनाएँ अधिक आकर्षित करती हैं क्योंकि उनके माध्यम से मैं उन भावों को भी व्यक्त कर पाती हूँ जिन्हें आकारों के माध्यम से कहना संभव नहीं लगता है। मुझे पेंटिंग में आकस्मिक प्रभाव भी आकर्षित करते हैं।

डॉ. संजीदा खानम

डॉ. संजीदा खानम ने काशी विद्यापीठ से कला की शिक्षा प्राप्त की। कला शिक्षा के बाद कुछ समय उन्होंने कला अध्यापन भी किया। वर्तमान में आप स्वतंत्र कलाकार के रूप में काम कर रही हैं। संजीदा खानम की कला दृश्य जगत में ऐसे अमूर्त रूपों की खोज है जो भावों की अतल गहराई को व्यक्त कर सकें। इसके लिए वह अमूर्त संरचनाओं के साथ ही टैक्सचर का भी प्रयोग करती हैं। केंद्रीय संस्कृति मंत्रालय की सीनियर फैलोशिप के साथ ही उन्हें कई पुरस्कार मिल चुके हैं। आप गाजियाबाद (उप्र) में रहकर कला साधना कर रही हैं।

मो. 99716 58859 Email: sanjeedaji@gmail.com

संजु दास



भारत एक राजनितिक स्थिति से अधिक सांस्कृतिक स्थिति है, वह भी विविधवर्णी। भाषाओं, सामाजिक संरचनाओं, सांस्कृतिक मान्यताओं का जैसा व्यापक संसार इस भू–भाग में उपलब्ध है वैसा कहीं और देखने को नहीं मिलता। ललित कलाओं को लेकर भारत भूमि अतिशय समृद्ध रही है जो हमेशा से सीधे–सीधे जीवन की कला रही है। आधुनिक कला के लोक लुभावने आलोक ने भारत की पारम्परिक कलाओं से समकालीन कलाकारों को काफी समय तक दूर रखा, पर पिछले कुछ समय से यह देखने को मिल रहा है कि ऐसे कलाकारों की संख्या तेजी से बढ़ रही है जो भारतीय कलाओं की परम्परा के महत्व को पहचानते हुए उसे समकालीन कला का आधार बना रहे हैं। चित्रकार संजु दास का नाम ऐसे कलाकारों में शामिल है। बिहार में साहित्य और कलाओं की समृद्ध परंपरा रही है। संजु इसी परंपरा की प्रतिनिधि हैं जो आज समकालीन कला में लोक कला के रंग इस तरह भर रही हैं कि उसमें एक नई सम्भावना जन्म लेती दिखती है। आज बिहार ही नहीं, राजस्थान, ओडिशा, बंगाल, मध्यप्रदेश आदि के अनेक कलाकार अपने यहाँ की परम्परागत कलाओं को समकालीन कला में एकमेव करते हुए खाटी भारतीय कला को सम्भव कर रहे हैं।

संजु का जन्म बिहार में हुआ और उन्हें अपने परिवार से मिथिला कला के संस्कार मिले। बचपन से ही कोहबर आदि बनाने के अभ्यास के बाद भी कलाकार बनने का विचार उनके मन में नहीं आया, शायद इसलिए कि लोककला जीवन का हिस्सा है जो महिलाओं द्वारा रची जाती है। और यह कहना गलत नहीं होगा कि लोककला की थाति को संजोने वाली महिलाएं कलाकार के रूप में पहचान बना सकती हैं व इसका कोई आर्थिक पक्ष भी है, इस दिशा में भारतीय समाज की कोई दृष्टि नहीं रही है। वह तो जापान व कुछ यूरोपीय

देशों के कला संग्रहकर्ताओं व शोधार्थियों के प्रयासों से मधुबनी व मिथिला पेंटिंग व आदिवासी कलाओं को एक पहचान व आर्थिक आधार मिला। बहरहाल, संजु के लिए कला जीवन की साधारण क्रिया ही रही पर जब उनका विवाह कलाकार रबींद्र कुमार दास से हुआ और वे दिल्ली आ गईं। तब उन्हें कला क्या है और उसका महत्त्व क्या है, इसका ज्ञान हुआ। दिल्ली आने पर उनका परिचय आधुनिक कला से हुआ। अपने पति से उन्हें इस दिशा में काफी मदद मिली। आधुनिक कला से परिचय ने उनकी कला को एक नई दिशा दिखाई। काफी समय तक वे लोक कला व आधुनिक कला को एक करने की साधना करती रहीं। अमूमन होता यह है कि आधुनिक कला के सम्पर्क में आने के बाद कलाकार अपनी कला परम्परा से दूर हो जाते हैं क्योंकि कला जगत के समकालीन चलन उन्हें ऐसा करने को प्रेरित करते हैं। संजु के सामने भी यह दुविधा आई पर स्वशिक्षित कलाकार होने के कारण वे जल्दी ही इस दुविधा से उबर गईं और उन्होंने समकालीन कला भाषा में अपने पारम्परिक कला अनुभव को दूध में चीनी की तरह मिला कर अपनी कला को अलग दिशा देना शुरू किया।



शुरू में वे अपने अब तक के संचित अनुभवों को रचती रहीं जिनमें जीवन की विभिन्न स्थितियाँ प्रमुख रहीं। शुरुआत में वे कागज पर जलरंग व आयल पेस्टल से छोटे आकार के चित्रों की रचना करती रहीं फिर कैनवास पर आयल में काम शुरू किया। धीरे–धीरे कैनवास का आकार बड़ा होने लगा। तब उन्होंने एक्रेलिक रंगों का प्रयोग शुरू किया। संजु की रंग योजना शुरू से ही मिथिला व मधुबनी कला पर आधारित रही पर बाद में पॉल गोगां व मार्क शगाल की रंग योजनाओं ने भी उन्हें प्रभावित किया। पर उनके चित्रों का संयोजन मिथिला कला पर ही आधारित रहा। रंगों को बरतने का तरीका भी लोककला जैसा ही रहा। अपने चित्रों में





मिथिला कला की खुशबू को बनाए रखने के लिए वे सतह को अलंकारिक बेल बूटों, छोटी छोटी आकृतियों व रेखांकन से सजाती हैं। ऐसे रूपांकनों में मछली व चिडिया सीधे–सीधे मिथिला कला का प्रतिनिधित्व कहे जा सकते हैं।

संजु के आरम्भिक चित्रों को देखें तो उनके विषय सीमित होते थे पर जल्द ही संचित अनुभव के साथ वर्तमान के प्रश्न उनकी कला के केंद्र बनने लगे जिनमें समकालीन जीवन में स्त्री की स्थिति प्रमुख है। आधुनिकता और विकास ने दुनिया भर में समाज में स्त्री की स्थिति व भूमिका को बदल कर रख दिया है। एक तरफ आज वह सामजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण घटक है तो दूसरी तरफ कई समाजों में उसकी स्थिति में बहुत अधिक परिवर्तन नहीं हुआ है। यह एक तरह का विरोधाभास है कि एक तरफ सौंदर्य जीवन की धूरी है तो दूसरी तरफ हिंसा, चाहे वह सामाजिक हो या राजनीतिक, उसका सबसे आसान व पहला लक्ष्य स्त्री ही होती है। इस सबके बावजूद स्त्री मानव समाज की एक बड़ी शक्ति है जिससे जीवन व समाज सम्भव होता है। संजु मानवीय जीवन में स्त्री की इसी स्थिति को केंद्र में रखकर एक नया विमर्श खड़ा करने का प्रयास करती हैं। इस बारे में वे कहती हैं कि ज्यादातर कलाकार स्त्री



के दैहिक सौंदर्य को ही रचते रहे हैं पर मैं अपने चित्रों में स्त्री के जीवन संघर्ष, उसके सपनों, जीवन में उसकी बहुआयामी भूमिका आदि को सामने लाने की कोशिश करती हूँ। बदलती व बदतर होती जाती सामजिक आर्थिक स्थितियों के बीच स्त्री हमेशा आशाओं व सपनों को जिन्दा रखती है। संजु के चित्रों को देखें तो उनमें एक तरफ निजी सम्बंधों की रागात्मकता है तो दूसरी तरफ लोक जीवन की ऐसी छवियाँ हैं जिनमें जीवन का आनन्द व संघर्ष दोनों उपस्थित हैं। जाहिर है कि सबके केंद्र में स्त्री है परन्तु बिना किसी नारीवादी वक्तव्य के। दरअसल यहाँ उसका होना ही महत्वपूर्ण है और वह भी इस तरह कि उसके बिना कुछ भी सम्भव नहीं लगता। जैसे उसके होने से ही सब कुछ है। इसे और अधिक प्रभावशाली तरीके से व्यक्त करने के लिए कलाकार अपने आसपास के जीवन से ऐसे प्रतीकों व बिम्बों को चुनती है जो बहुत परिचित तो हैं ही, ज्यादातर लोगों के जीवन का हिस्सा भी हैं या रहे हैं। एक तरफ उनके यहाँ पशु–पक्षियों, चाँद–सितारों जैसे प्रतीक हैं तो दूसरी तरफ संचित अनुभव का हिस्सा रहे ग्रामीण जीवन की झांकियाँ हैं।

ग्रामीण जीवन की झांकियाँ उनके चित्रों में अक्सर आती हैं। ऐसे दो बड़े चित्रों में उन्होंने गांव के जीवन के उल्लास और अवसाद को एकसाथ रचा है। एक चित्र 'पीपली लाइव' शीर्षक से है जो इसी नाम की फिल्म से प्रेरित है पर उसमें कलाकार ने ग्रामीण जीवन के यथार्थ को अपनी तरह से रचा है। इसी प्रकार 'होली' शीर्षक से उनके कुछ चित्र हैं। यहाँ मैं एक चित्र का उल्लेख विशेष रूप से करना चाहूँगा जिसमें उन्होंने तीन स्त्रियों को रचा है। इनमें एक एकदम ग्रामीण है तो दूसरी महानगर की वासी और तीसरी आधुनिका। एक ही चित्र में उन्होंने भारतीय समाज में स्त्री की तीन अवस्थाओं के माध्यम से सामाजिक विरोधाभास को व्यक्त किया है। संजु की कला भाषा की बात करें तो उसमें हमेशा एक तरह की मासूमियत नजर आती है, खासकर आकृतियों में फिर चाहे वे मानवीय हों या पशु–पक्षियों की। उनके यहाँ आकारों में जो एक तरह की अनगढ़ता है वही उनकी खूबसूरती है। रंग चयन भी उनका थोड़ा अलग है। आमतौर पर वे चटख रंगों पीला, नीला, हरा लाल

अधिक प्रयोग करती हैं। उनके रंग प्रयोग पर मधुबनी व मिथिला कला का प्रभाव कहा जा सकता है पर वह है कला की समकालीन धारा के अनुरूप। वे अक्सर अपने चित्रों में स्त्री के वस्त्रों को लोक कला के समान अलंकृत करती हैं जिनमें वे आधुनिक डिजाइन का भी समावेश करती हैं।



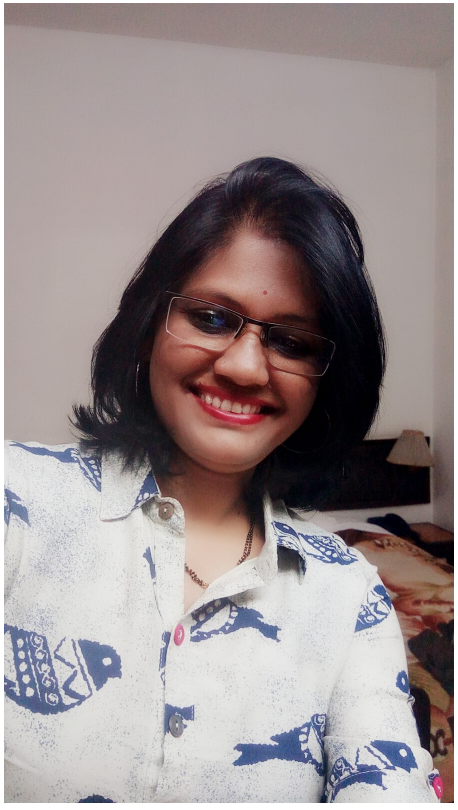
आत्मकथ्य

मैंने बचपन से अब तक जो भी देखा है महसूस किया है उसी को अपनी कलाकृतियों में व्यक्त करती हूँ। मिथिला चित्रकला के साथ मेरा जीवन शुरु हुआ जिसे आधार बना कर मैंने अपनी अलग कला भाषा विकसित की है। मैं अपनी कला में स्त्री की दुनिया को केंद्र में रख कर काम करती हूँ। मैं अपनी पेंटिंग्स में गांव और घर की यादों के साथ ही जीवन के विभिन्न आयामों को रचती हूँ। मेरी कला जीवन के उत्सव को दिखाने का प्रयास है। इस तरह मैं अपनी कला से लोगों में सकारात्मक भावनाएं जगाने का प्रयास करती हूँ।

संजु दास

संजू दास का जन्म 1972 में कमरौली दरभंगा बिहार में हुआ। वह बिहार के मैथिली भाषी क्षेत्र में पैदा हुई एक स्वप्रशिक्षित समकालीन चित्रकार हैं जिन्होंने सबसे पहले मिथिला पेंटिंग से प्रेरणा लेकर आधुनिक कला की दुनिया में अपनी व्यक्तिगत शैली और पहचान बनायी। मिथिला महिला कालेज लहेरियासराय से ग्रेजुएट हैं और इन दिनों गाजियाबाद उप्र में रहकर कला साधना कर रही हैं। आपको 2017–18 में बिहार सरकार द्वारा वरिष्ठ महिला कलाकार के सम्मान से सम्मानित किया गया। आपकी अब तक छह एकल और कई समूह प्रदर्शनियां आयोजित कर चुकी हैं।

मो. 9899242017 Email: rawindra_sanju@yahoo.com



स्वाती साबले

भावनात्मक स्थितियों के द्वंद्व के साथ ही विरोधाभासी स्थितियों को केंद्र में रखकर चित्र रचना करने वाली स्वाती साबले ने बहुत कम समय में अपनी अलग पहचान बना ली है। विगत करीब दो दशक से कला साधना में रत स्वाति ने पेंटिंग के साथ ही इंस्टालेशन और दूसरे माध्यमों में भी काम किया है। स्त्री की भौतिक और सामाजिक स्थिति के साथ ही उसकी मानसिक अवस्था को भी वह रचती हैं। स्वाति अपनी पेंटिंग्स में स्त्री की दमित स्थिति को लेकर किसी तरह का संकेत नहीं देती हैं, विशेषरूप से स्थितियों के बारे में, वह बस स्त्री के संघर्ष को सामने रखती हैं। इस तरह वह अपनी पेंटिंग्स को विवरणों से बचाते हुए दर्शकों के लिए विचार का खुला आकाश छोड़ देती हैं। और शायद यही कला का काम भी है कि वह किसी तरह का अंतिम निष्कर्ष नहीं देती अपितु बहुआयामी निष्कर्ष की स्वायत्त स्थिति को संभव करती है।

स्वाती साबले ने करीब दो दशक की अपनी कला यात्रा में तकनीक के साथ ही भावों की अभिव्यक्ति पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर लिया है। किसी भी कलाकार के लिए दो दशक की कला यात्रा बहुत अधिक भले ही न हो पर उसमें ही उन्होंने अपनी अलग पहचान बना ली है। स्त्री की विभिन्न स्थितियों में भावात्मक स्थिति उनका मुख्य विषय कही जा सकती है पर सबसे अच्छी बात यह है कि उन्होंने अपने रचना संसार में जीवन की सकारात्मक स्थितियों को प्रमुखता दी है। उनकी कई पेंटिंग्स में स्त्री भावों और स्थितियों के भंवर में या किसी दबाव में दिखाई अवश्य देती है पर वहाँ उसका संघर्ष भी दिखाई देता है। ऐसा



लगता है जैसे उनके कैनवास पर स्त्री किसी भी स्थिति में खुद को उबारने की कोशिश कर रही है।



समकालीन जीवन में स्त्री की उपस्थिति और उसकी शक्तिशाली छवि के बावजूद, उसे समाज में समान अधिकारों का संघर्ष करना पड़ता है। पितृसत्ता की गहरी जड़ें पूर्व और पश्चिम दोनों समाजों में इतनी मजबूत हैं कि वह स्त्री को बराबर की भूमिका में स्वीकार नहीं कर पाती है। स्वाति की पेंटिंग्स इस वास्तविकता को प्रतीकात्मक रूप में उजागर करती हैं। उनकी रचनाओं में सहअस्तित्व और सामंजस्य की जो छवि प्रस्तुत होती है, वह सतह पर तो सच प्रतीत होती है, लेकिन गहराई में देखने पर इसके विपरीत स्थिति का संकेत देती है। स्वाति की कला इस संदर्भ में व्यापक विमर्श और संवाद की आवश्यकता को स्पष्ट करती है, जिससे स्त्री के वास्तविक स्थिति और संघर्षों को समझा जा सके। उनकी पेंटिंग्स दर्शाती हैं कि समाज में स्त्री की स्थिति को सुधारने और समानता स्थापित करने के लिए अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

इसके साथ ही वह अपनी पेंटिंग्स में सहअस्तित्व को केंद्र में रखते हुए एक ऐसा सामाजिक वातावरण रचती हैं जो वास्तविक है। कला में कल्पना का समावेश अपरिहार्य है पर इस कल्पना को स्वाति एक अवसर के रूप में लेती हैं, अपनी बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए। इसीलिए हम पाते हैं कि उनकी पेंटिंग्स में स्त्री के साथ ही पुरुष भी कई बार संघर्षरत दिखाई देते हैं। वह पेंटिंग्स को समकालीन सामाजिक के साथ ही सांस्कृतिक, आर्थिक, और कई बार राजनीतिक संदर्भ भी देती दिखाई देती हैं। इसके लिए वह पेंटिंग के अलावा इंस्टालेशन का भी सहारा लेती हैं। स्वाति के चित्रों में संरचनात्मक तत्वों का अत्यधिक महत्व है। कैनवास पर वह टैक्सचर का बड़ी खूबसूरती से प्रयोग करती हैं। चित्रों का संयोजन भी संतुलित है जिसमें



वह नेगेटिव स्पेस का बड़ी खूबसूरती से प्रयोग करती हैं। उनके यहां नेगेटिव स्पेस सिर्फ खाली जगह नहीं है बल्कि भरी हुई जगह को उभरने का आधार देता है।

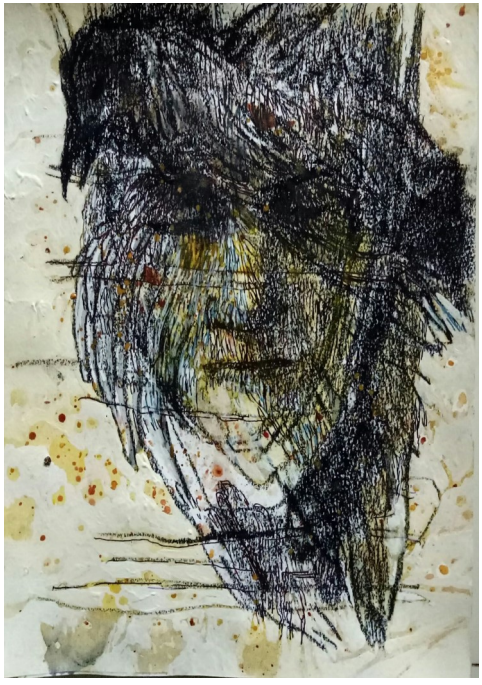
स्वाती साबले की कला में टैक्सचर का उपयोग बेहद महत्वपूर्ण और सृजनात्मक होता है। उनके चित्रों में टैक्सचर न केवल सौन्दर्य की दृष्टि से चित्र को आकर्षक बनाता है, बल्कि इसमें गहराई और विचारों की परतें भी जोड़ता है। स्वाती की पेंटिंग्स में टैक्सचर एक माध्यम के रूप में प्रयोग होता है जो विभिन्न भावनाओं, अनुभवों और विचारों को व्यक्त करने में सहायक होता है। यह टैक्सचर उनके चित्रों में अर्थ विस्तार और अर्थ भिन्नता की संभावनाओं को जन्म देता है, जिससे दर्शक को कई स्तरों पर चित्र की व्याख्या करने का मौका मिलता है। टैक्सचर चित्र में सिर्फ सतही सौन्दर्य नहीं जोड़ता, बल्कि उसकी गहराई और अर्थ को भी प्रभावित करता है, जिससे चित्र में भावनात्मक और बौद्धिक तत्व उभरकर सामने आते हैं।



आत्मकथ्य

मेरी कला अपने आसपास के जीवन की कला है जिसमें मैं व्यक्ति के संघर्ष को और उसकी भावनाओं को महत्व देते हुए चित्र रचना करती हूँ। मेरी कला में स्त्रियों की दुनिया की ऐसी छवियाँ हैं जिनमें उनकी यथार्य स्थिति के साथ ही उनका संघर्ष दिखाई देता है। कैनवास पर आकारों के साथ ही भावनाओँ और स्थितियों की जटीलता को उजागर करने के लिए मैं टैक्सचर का प्रयोग करती हूँ। मैं मानव आकृतियों के साथ अमूर्त टैक्सचर को मिलाती हूँ जो चित्रों को विषय के स्तर पर अधिक गंभीर बनाता है। **स्वाती साबले**





स्वाती साबले का जन्म 1975 में मुंबई में हुआ। उन्होंने 1999 में एसएनडीटी यूनिवर्सिटी से कला और चित्रकारी में मास्टर डिग्री प्राप्त की, उसके बाद 2000 में पुणे के अभिनव कला महाविद्यालय से कला शिक्षक का डिप्लोमा प्राप्त किया। 2001 में उन्होंने मुंबई में सर जेजे इंस्टीट्यूट ऑफ एप्लाइड आर्ट में फोटोग्राफी में एटीसी और फिर 2019 में मुंबई में सर जेजे स्कूल ऑफ आर्ट में आर्ट मास्टर्स प्राप्त किया। उन्हें 2021 में प्रफुल्ला धानुकर आर्ट फाउंडेशन मेरिट अवार्ड सहित उनके काम के लिए पुरस्कार मिले हैं। दो एकल प्रदर्शनियों के अलावा पेरिस और कोरिया सहित देश–विदेश में अनेक समूह प्रदर्शनियों में आपका काम प्रदर्शित हो चुका है। वर्तमान में आप मुंबई में रहकर कला साधना कर रही हैं।

मो. 98697 31607 Email: swatisabale03@gmail.com

विजया वेद



सभी कलाएँ जीवन में पूर्णता की तलाश की मानवीय आकांक्षा की अभिव्यक्ति रही हैं। जब गुफावासी मनुष्य ने सबसे पहले गुफा की दीवारों पर पत्थरों से रेखाओं से अपने आसपास के जीव जगत को रचना शुरू किया था तब शायद वह देखे को रेखांकित करने भर की कोशिश रही होगी परन्तु जैसे–जैसे मनुष्य का बौद्धिक विकास होता गया तब जीवन यापन की अन्य क्रियाओं के साथ–साथ उसमें अभिव्यक्ति की भूख जगी होगी और उसे अपनी कल्पनाओं को आकार देने के लिए एक माध्यम की जरूरत हुई होगी और इसी जरूरत ने विभिन्न कलाओं को जन्म दिया होगा जिनमें चित्रकला भी एक है। यही अभिव्यक्ति की आकांक्षा जीवन में पूर्णता की तलाश बनी। आज भी जो लोग किसी कला में लगे हैं उनमें पूर्णता की तलाश एक प्रमुख ध्येय होता है। चित्रकार विजया वेद के चित्रों को जब मैं देखता हूँ तो महसूस करता हूँ कि इन चित्रों ने जितना सुख और प्रकाश रचने वाले को दिया है उतना ही दे खने वाले को भी देते होंगे। वे एक तरह से जीवन में पूर्णता की तलाश की रंगमयी अभिव्यक्ति हैं।



पहली नजर में देखने पर ही विजया के चित्र के पात्र किसी गहन आध्यात्मिक शांति में निमग्न प्रतीत होते हैं परन्तु वे किसी तरह के धार्मिक चित्र नहीं हैं जैसे पोस्टरों में होते हैं। उनके चित्र अपनी संरचना में भले ही आध्यात्मिक भावना लिये दिखाई दें पर वास्त. विकता में तो वे इसी संसार के चित्र हैं जिनमें जीवन अपने विभिन्न रंगों में प्रकाशमान है। उनकी आकृतियाँ एकदम शांत, स्निग्ध और दीप्त हैं। उनमें किसी तरह की बेचैनी प्रत्यक्ष नहीं होती, मानो कलाकार कहना चाहती है कि हम बाहरी सांसारिक अशांति में घिरे होकर भी आंतरिक शांति प्राप्त कर सकते हैं।

आंतरिक शांति मन में होती है जो साधी जा सकती है परन्तु प्राप्त नहीं की जा सकती। यही कारण है कि कलाकार ऐसी आकृतियाँ रचती है जिन्हें देखने पर लोगों को शांति मिले, जो जीवन की आपाधापी में कुछ पल के लिए मन को निर्मल कर सके। और यही वजह है कि विषय–वस्तु और अपनी संरचना में आध्यात्मिक प्रतीत होते उनके चित्र पूरी तरह सांसारिक हैं। उनके चित्रों के शीर्षक भी कुछ यही भाव प्रकट करते हैं। बुद्ध और भिक्षु के अलावा जीवन का राग, आशा, हारमोनी, स्पर्श, जीवन की खोज, यात्रा, संदेश आदि उनके प्रमुख शीर्षक हैं। इसके अलावा शीर्षकहीन चित्रों की भी कमी नहीं है परंतु उनमें भी भाव अन्य चित्रों के समतुल्य ही है।

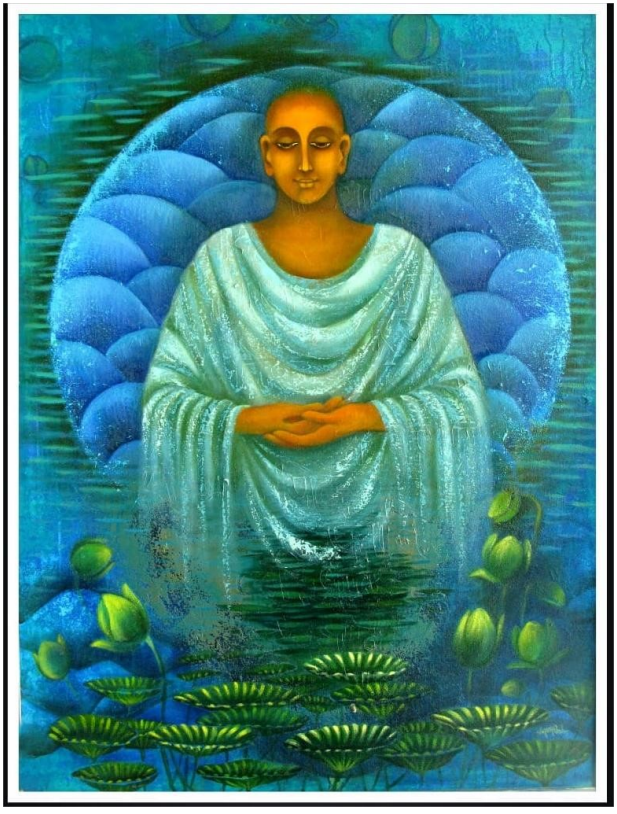


बुद्ध और बौद्ध भिक्षुओं सादृश्य आकृतियां अक्सर उनके कैनवास पर अवतरित होती हैं परन्तु वे पूरी तरह बुद्ध या भिक्षुओं की आकृतियां नहीं हैं क्योंकि विजया उन्हें ऐसी सामान्य आकृतियों तक ले जाती हैं कि वे एक साथ आध्यात्मिक और सांसारिक निहितार्थ प्रकट करती हैं। उनके यहाँ स्त्री की आकृतियों में भी बुद्ध सी प्रशांति प्रतीत होती है पर अपने कार्य–व्यापार में वे पूर्णतया सांसारिक हैं। हाँ, इतना अवश्य है कि वे अपने चित्रों में सांसारिकता या उसके यथार्थ को उस तरह नहीं लाती जैसे कई यथार्थवादी चित्रकार लाते हैं। इसके लिए विजया ऐसे प्रतीकों को लेती हैं जो एक साथ सांसारिकता, आध्यात्मिकता और दार्शनिकता को प्रकट करते हैं। जैसे उनके चित्रों में अक्सर पक्षी आते हैं जो एक साथ निर्मलता, मासूमियत को तो प्रकट

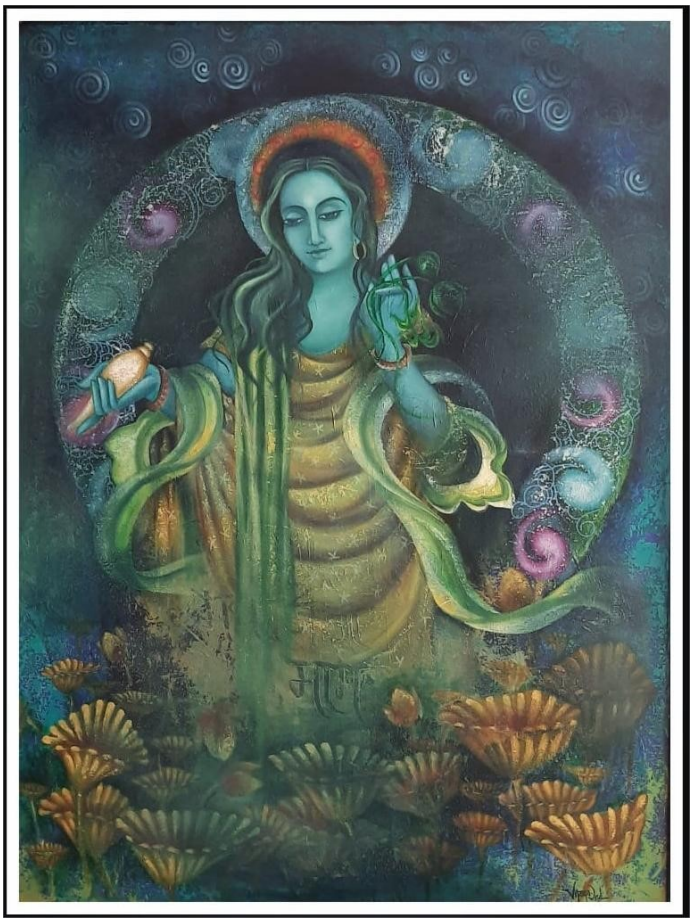


सहज मानवीय आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति है।

इसी प्रकार उनके चित्रों में कमल का प्रयोग बहुतायत में देखने को मिलता है। कमल का फूल एक तरफ मानवीय सौंदर्य चेतना को प्रतिबिम्बित करता है तो दूसरी तरफ उसका संबंध आध्यात्म से भी है। उनके कई चित्रों में मुखौटों का भी चित्रण मिलता है जो समकालीन जीवन करते ही हैं साथ ही हमें मानवीय होने का संदेश भी देते हैं। इसके साथ ही उनके चित्रों में अक्सर पतंग आती हैं जो स्वतंत्रता और कल्पनाओं की उड़ान की सांकेतिक अभिव्यक्ति कही जा सकती है। कहीं न कहीं इसका संबंध स्त्री के जीवन से भी है और वह एक स्त्री की मुक्ति की कामना ही नहीं उसकी कल्पनाशीलता की प्रतीक भी है। परन्तु इससे विजया के चित्रों का किसी तरह का स्त्रीवादी विमर्श करना गलत होगा, क्योंकि ये किसी आंदोलन या नारेबाजी के प्रतिफल नहीं हैं बल्कि



में बढ़ती मुखौटा प्रवृत्ति का प्रतीक कहा जा सकता है। प्रेम जीवन का सबसे सुंदर पक्ष है और उसने सभी कलाकारों को रचने की शक्ति दी है। विजया के यहाँ प्रेम मानवीय जीवन के कोमलतम पक्ष के रूप में सामने आता है। बुद्ध के अलावा विजया ने कृष्ण को लेकर भी चित्र रचे हैं परंतु उनके अनेक चित्र ऐसे हैं जिनमें कृष्ण जैसी आकृतियाँ हैं जो किसी साधारण व्यक्ति से लेकर किसी आदिवासी तक की हो सकती है। पिछले कुछ समय से विजया ने संरचना के स्तर पर थंका कला की शैली का आंशिक अनुपालन करते हुए चित्र रचे हैं। इन चित्रों में कई बार अजंता एलोरा के चित्रों की स्मृतियों के प्रतिबिंब दिखाई देते हैं तो कहीं थंका कला की घुमावदार व लहरदार संरचनाएँ। थंका कला बौद्ध धर्म से संबंधित है जो आत्म प्रकाश और स्थूलता से सूक्ष्मता की यात्रा को महत्वपूर्ण मानता है। थांका का अर्थ है लिखना। इस कला का जन्म व विकास नेपाल में हुआ वहाँ से यह कला तिब्बत पहुँची जहाँ लामाओं ने धार्मिक शिक्षाओं को लोगों तक पहुँचाने के लिए इस कला का विकास किया। थंका कला में कथात्मकता एक प्रमुख गुण है। यह गुण हम विजया वेद की कला में भी देख सकते हैं। उनके चित्रों में कहानियों की तरह अनेक पात्र न हों पर अकेला पात्र भी उनके यहाँ कुछ कहता प्रतीत होता है। इसके लिए वह कमल के फूल, घट, शंख जैसे प्रतीकों के साथ ही लिपि का भी आंशिक प्रयोग करती हैं। विजया की चित्रकला का एक सुंदर पक्ष रंग प्रयोग है। वे आमतौर पर रंगों के प्रयोग के प्रति बहुत सजग रहती हैं। विषय के अनुरूप रंग की अनेक परतों को बरतते हुए वे कैनवास पर ऐसा टैक्सचर रचती हैं जो चित्र को अधिक प्रभावशाली बना देता है।



आत्मकथ्य

मेरी कला में ज्यादातर ध्यानमग्न मानव आकृतियाँ हैं जो प्राकृतिक परिवेश में हैं। उनके आसपास शंख, कछुआ, कमल, चिड़िया आदि की उपस्थिति चित्र को एक नया आयाम देते हैं। मैंने पिछले कुछ समय में थंका पेंटिंग की संरचनात्मक विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए चित्र रचना की है। मैं अपनी कला में जीवन को आत्म – प्रकाश की अवस्था में देखती हूँ।

विजया वेद



विजया वेद वरिष्ठ कलाकार हैं जिन्होंने 1996 में कॉलेज ऑफ आर्ट, नई दिल्ली से बीएफए किया है। इसके साथ ही उन्होंने जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर से पेंटिंग में एमए किया है। लंदन और इटली में समूह प्रदर्शनियों में आपके काम प्रदर्शित हो चुके हैं। एकल प्रदर्शनियों के अलावा आप देश–विदेश में समूह प्रदर्शनियां करती रही हैं। 20 साल से अधिक की अपनी कला यात्रा में विजया वेद ने कई विधाओं में काम किया है। आप दिल्ली में रहकर कला साधना कर रही हैं।

मो. 9899708769 / 9811178769

Email: vijayaved777@gmail.com



डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज (1–2–1961) वरिष्ठ कलाकार एवं लेखक हैं। वर्ष 1982 से साहित्य, कला एवं अन्य विषयों पर विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में उनके लेख एवं रचनाएँ प्रकाशित होती रही हैं। लगभग तीन दशकों तक लगातार पत्रकारिता करने के बाद वे पूरी तरह से कला एवं लेखन में संलग्न हैं। उनकी एकल एवं समूह प्रदर्शनियाँ दिल्ली, मुंबई, जयपुर एवं अन्य शहरों में आयोजित हो चुकी हैं। उन्होंने अनेक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय कला प्रदर्शनियों में भाग लिया तथा अनेक कला प्रदर्शनियाँ एवं कला कार्यशालाएँ आयोजित की हैं। वे कला, साहित्य एवं अन्य विषयों पर हिंदी एवं अंग्रेजी में पत्र–पत्रिकाओं एवं वेब पोर्टलों पर लिखते हैं। उनकी कला पर दो पुस्तकें 'मल्टी डायमेंशनल टाइम' और 'मिरर ऑफ इमेजेस', दो व्यंग्य एवं एक कविता संग्रह प्रकाशित हुए हैं। उनके लेख अनेक कला एवं अन्य पुस्तकों में प्रकाशित हैं।

Publisher/ Writer
Dr. Ved Prakash Bhardwaj
F-2/ 781 Shalimar Garden Ext. 1
Sahibabad, Ghaziaba, (UP) 201001
Mob. 9871699401
Email: bhardwajvedprakash@gmail.com

9 789334 134445